समानांतर जीवन के

(कहानी संग्रह)

समानांतर जीवन के

रश्मि दीक्षित

New World Publication

© लेखकाधीन
प्रकाशक : न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन
C-515, बुद्ध नगर, इंद्रपुरी, नई दिल्ली-110012
मो. : 8750688053
ईमेल : newworldpublication14@gmail.com
प्रथम संस्करण : 2026
मूल्य : 225 रुपये
आवरण चित्र : वाज़दा खान
मुद्रक : सूरज प्रिंटर्स, दिल्ली (110032)

SAMANANTAR JEEVAN KE (Stories)
by RASHMI DIXIT

अपनी बात

कहानियां शायद हमारे मन में दबी हुई भावनाएं हैं जिन्हें हम चाह कर भी बाहर नहीं ला पाते, बोल नहीं पाते, किसी से कह नहीं पाते। हमारे जीवन के तमाम रिश्ते और मन में दबी उत्कंठाओं का सामंजस्य बिठा पाना नामुमकिन सा लगता है। कभी जिम्मेदारियों का पलड़ा भारी हो जाता है तो कभी इच्छाओं का। पर शायद जीतती जिम्मेदारियां ही हैं। और मन की उत्कंठाएं कहीं किसी कोने में दबी जाती हैं। फिर वह निकलती है शायद रचना के रूप में, कहानी या कविता के रूप में।

इस कहानी संग्रह में भी शायद वही दबी भावनाएं किसी पात्र के प्रति न्याय, आहत भावनाएं, समाज के किसी प्रताड़ित वर्ग की व्यथा, प्रेम, परिवार, मित्रता, संघर्ष को कहानियों में साझा करने का प्रयास है। कहानियों को लिखते समय मैंने उन पात्रों को खुद जिया है मुर्दाघर में रहने वाले काशी को, जो दिन-रात उन मरे हुए लोगों के साथ रहता है, जिन्हें लोग देखकर डरते हैं कूड़ा बीनने वाली मांगी जो कूड़े के ढेर सी अपनी जिंदगी को ढो रही है। चिता जलाने वाले सुरेंद्र को जो अपने सपनों को चिता में जलते हुए देखता है। कठपुतली बनाने वाले बिहारी को जो कपड़े की कठपुतलियां में जान फूंक कर अपनी रोजी चलाता है। सौरव और नेहा को जो चंद घंटे के मिलने से ही अपनी सारी परेशानियों को भूल जाते हैं। अपने जीवन को निरर्थक मानने वाले सौरभ को जो स्टेपनी सा कहीं भी काम आ

जाता है। आज के समय में आपकी जिंदगी में आउटडेटेड पिता का संघर्ष, सिचुएशनशिप में जीते आजकल के युवा जो प्रैक्टिकल होकर हर रिश्ते को देखते हैं। फगुआ मांगते सोनू की व्यथा जिसे समाज ने देह व्यापार में धकेल दिया और भी कई ऐसी अनकही कहानी जो समाज के फैसलों के आगे चुप हो गई क्या चुप करा दी गई।

इन कहानियों में मैंने वास्तविकता को दर्शाने का प्रयास किया है जिसमें खुशी और दुखों दोनों का समावेश है। इस कहानी संग्रह की कहानी पाठक तक संदेश पहुंचाने का प्रयास करेगी। उम्मीद है कि इन कहानियों के माध्यम से आप मेरे पात्रों से जरूर जुड़ पाएंगे।

मैं कहानी लेखन इसलिए कर पाती हूं कि मेरा परिवार मुझे इसका समय, इजाजत देता है, उनके समय में से समय निकालकर ही यह कर पाती हूं, डॉ. समीर दीक्षित, शिवांश दीक्षित, निहारिका दीक्षित की वजह से ही यह संभव हो पाया। वरिष्ठ लेखक कवि डॉ. प्रतापराव कदम के मार्गदर्शन और न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन की सजग पहल से ही यह कहानी संग्रह 'समानांतर जीवन के' आपके हाथों तक पहुंच पाया।

डॉ. रश्मि दीक्षित

अनुक्रम

अपनी बात *5*
अकेला मकान 9
मुर्दाघर 12
फगुआ 16
कठपुतली 25
मनौती 31
शून्य से साकार तक 37
गीली लकड़ियां 42
गुल्लक 46
वह पहाड़ी 54
सड़क 58
फैसला 63
स्टेपनी 66
गुलमोहर 71
दहलीज 76
सिचुएशन शिप 82
आउटडेटेड 88
मुकद्दम 92
अपने अपने दड़बे 100
अजनबी 106

अकेला मकान

दिसंबर की ठंड कंपकंपी ला रही थी। सुबह 9:00 बजे तक भी हल्का कोहरा रहता था। लगता जैसे किसी धुएं की चपेट में पूरा शहर आ गया हो। आज सुबह हल्की सी धूप थी इसलिए थोड़ा कोहरा कम था। लोग भी स्वेटर शाल पहने सड़कों पर चहल कदमी करते दिख रहे थे।

रोज की तरह मैं उस घर के सामने से निकली। रोज की तरह बंडल बना हुआ अखबार दरवाजे के बाहर पड़ा था। रोज की तरह मैंने नेम प्लेट पर लिखा नाम पढ़ा 'देवकरण मेहता, पूर्व मंत्री' और आगे बढ़ गई। मैं रोज अपनी स्कूटी से वहां से गुजरती, रोज सुबह 9:00 से 9:30 के बीच मेरा वहां से गुजरना होता है। यह कोने का अकेला मकान था जो उस मकानों की पंक्ति में आखिरी था। मैंने बस बाहर से ही देखा था मकान को। हमेशा सूना दिखता। बस नेम प्लेट के ऊपर सुबह तक बल्ब जलता, जिसे पता नहीं क्यों पर मैं रोज ही पढ़ती। पंक्ति का आखिरी मकान होने के कारण वह सुनसान सा लगता।

मुख्य दरवाजे के बाहर बड़ा सा नीम का पेड़ था। कटाई छटाई नहीं होने के कारण बहुत बढ़ चुका था। सुबह-सुबह सूरज की किरणें उसकी टहनियां में से छन छन कर आती। आंगन की सफाई नहीं होने के कारण फर्श पर काई जम गई थी। पूरा मकान पक्की दीवार से घिरा था। उस आदमकद दीवार पर जगह-जगह कांच लगे थे। ताकि कोई बाहरी व्यक्ति अंदर ना कूद सके। किनारे पर एक लोहे का गेट लगा था जिस पर लोहे की सलाखों से

कमल के फूल बने थे। पहली बार देखने पर मकान बहुत भव्य लगता पर उसका सूनापन मुझे हमेशा सालता था।

अभी कुछ दिनों से मैं देख रही थी कि गेट के बाहर एक कुत्ता लेटा रहता है जैसे ही मेरा वहां से निकलना होता वह मुंह उठाकर मुझे देख लेता और फिर वैसे ही लेट जाता शायद घर का सूनापन उसे भी उदास कर रहा था। मैं वहीं से 4:00 बजे लौटती पर तब भी वह घर उसी स्थिति में दिखता। यह तो तय था कि घर में कोई रहता है पर किसी का ना दिखना मेरी उत्सुकता को बढ़ाता था। हां बस लौटते समय वह अखबार का बंडल वहां नहीं होता। रोज की तरह आज भी मैं वहां से गुजरी और इत्तेफाक से मेरी स्कूटी इस घर के सामने बंद पड़ गई। मैंने स्कूटी घसीटते हुए उसे दीवार के किनारे लगा दी मकान के पीछे से रेल की पटरिया निकलती थी। अचानक सन्नाटे को चीरती एक रेल वहां से गुजरी मैं बुरी तरह घबरा गई।

पहले ही यह मकान मेरे लिए रहस्य बना था और अचानक इस आवाज के लिए मैं तैयार नहीं थी। मुझे देर भी हो रही थी। आसपास कोई नहीं दिख रहा था। शायद ठंड के कारण सब अपने-अपने घरों में दुबके थे। मैंने हिम्मत कर गेट खोला। गेट पर जंग लग चुकी थी। चरमराहट की आवाज के साथ वह खुला। मैं मकान के आंगन में दाखिल हो चुकी थी। सारा आंगन नीम की पत्तियों से भरा पड़ा था। जगह-जगह काई लगी हुई थी। मैं संभाल कर मुख्य दरवाजे तक पहुंची। दरवाजे का सारा पेंट उखड़ चुका था। जगह-जगह से टूट भी चुका था। शायद ढंग से बंद भी नहीं था, बस अटकाया गया था। मैंने दरवाजे की कुंडी खटकाई, थोड़ी देर कोई जवाब नहीं आया, मैं चुपचाप खड़ी रही। एक गिलहरी बार-बार नीम के पेड़ से चढ़कर उतर रही थी वह पहली बार जब पेड़ से उतरी तो अचानक मुझे दरवाजे पर खड़ी देख कर रुक गई लगा जैसे देख रही हो कि यह नया मेहमान कौन है। पिछले दो पैरों पर खड़ी होकर वह अपनी छोटी-छोटी काली मिर्च सी आंखों को मटका कर मुझे देख रही थी। उसकी घनी बालों वाली पूछ जमीन पर इधर-उधर घूम रही थी जिससे वहां पड़े नीम के पत्ते तीतर बितर हो गए। वह किसी अपरिचित को देखकर नीम पर चढ़ गई। मुझे देख वह बार-बार चढ़ती और फिर उतरती। उसे शायद मेरा आना ठीक नहीं लग रहा था शायद मैं उसकी स्वतंत्रता में खलल डाल रही थी।

थोड़ी देर में दरवाजा खुला सामने लगभग 75-80 वर्ष के वृद्ध खड़े थे। वह शायद किचन में थे जहां से उन्हें यहां तक आने में 5 मिनट लगे।

उनके पांव पजामे में भी धनुषाकर दिख रहे थे जिससे लग रहा था कि उन्हें चलने में समस्या थी। दरवाजा खोल वे मुझे देखने लगे। मैं क्या बोलू, समझ ही नहीं पा रही थी। अचानक आज पहली बार मैंने उनके घर में कोई हलचल देखी थी। वह मुझे देख हाथ के इशारे से बोले कि मैं यहां क्यों आई हूं। मैं भी हिम्मत कर बोली

"सर! अंकल! मैं...."

वह अचंभित हो मुझे देख रहे थे। शायद उस गिलहरी की तरह उन्हें भी मेरे आने का अचरज हो रहा था।

"अंकल मेरी स्कूटी यहां खराब हो गई है, आपके यहां पेट्रोल मिलेगा थोड़ा, या यहां कहीं आसपास।"

मेरी बात खत्म हो गई। फिर भी वह मेरे चेहरे को देख रहे थे। उनका मुंह आधा खुला था आधे दांत टूटे और आधे आड़े तिरछे दिख रहे थे। मुझे लगा शायद उन्हें सुनाई नहीं देता था। मैंने एक बार फिर तेज आवाज में अपनी बात दोहराई।

वह बोले - "हां! हां सुन लिया, चिल्लाती क्यों हो?"

अब चेहरा देखने की बारी मेरी थी। मैं उनके जवाब का इंतजार कर रही थी।

"पेट्रोल तो मेरे पास नहीं है, अब गाड़ी ही नहीं रही तो पेट्रोल कहां से होगा। और आस पड़ोस का मुझे पता नहीं"। वे बहुत ऊंची आवाज में बोल रहे थे। मेरी और उनकी तेज बातचीत से चारों ओर के वातावरण में अफरातफरी मची थी। वह गिलहरी बार-बार पेड़ पर चढ़ती हमें देखते फिर चढ़ जाती। आंगन में बैठी एक गौरैया भी तेज आवाज सुनकर उड़ चुकी थी। नीम का पेड़ भी हिल्कर अपनी उपस्थिति दर्ज कर रहा था। नीम की पत्तियां इधर-उधर बिखरी थी पर शायद इसी किसी आगंतुक आने की खुशी में और पत्तियां गिरने लगी। मैं दरवाजे पर खड़ी थी वह बुजुर्ग अंदर चले गए मुझे कुछ कहा नहीं। शायद वे अकेले रहते थे, कम सुनते थे, चलने में असमर्थ थे इसलिए पड़ोस में किसी से बातचीत नहीं करते थे। मकान अकेला था, शायद वे भी अकेले थे मुझे लगा आज मेरे पहुंचने से वह मकान सांस ले रहा था।

❑❑❑

मुर्दाघर

रात के 8:00 बजे थे पर काले बादलों के कारण रात और गहरी लग रही थी। बारिश अभी अभी बंद हुई थी। मुर्दाघर के सामने उखड़े हुए फर्श के गड्ढे में पानी भर गया था। छत पर लगे टिन से पानी टपक रहा था। पानी की टिप टिप से वँहा का शांत वातावरण थोड़ा रहस्मयी बन गया था। काशी मुर्दाघर से बाहर निकला, बरामदे से बढ़कर मैदान में आ गया। बाहर आकर उसने हाथ आसमान की ओर उठाकर अंगड़ाई ली और अस्पताल के पीछे लगी बस्ती की ओर चल दिया। काशी की खोली इसी बस्ती में थी। सड़क के गड्ढो में सड़क ढूंढना कठिन था। बारिश के कारण गली में कीचड़ हो गया था। घरो से निकलती रोशनी में कीचड़ चमक रहा था।

काशी के घर के किवाड़ लुड़के थे, सीलन से दरवाजे फूल गए थे, सो उन्हें केवल लुढ़का ही दिया जाता। बाहर बारिश के पानी से भरी बाल्टी में उसने हाथ पैर धोए और दरवाजे को धीरे से धका कर अंदर आ गया। गुंजा सो चुकी थी, काशी ने उसे उठाना ठीक नहीं समझा। उसने दो अगरबत्ती निकाल भगवान की फोटो के आगे सुलगाई और दीवार की दरार में खोंस दी। रोज-रोज अगरबत्ती लगाने से बहुत सी तिलिया जमा हो गई थी और धुएं से उसे जगह धुंधली सी लाइन बन गई थी। ऐसा लगता वह लाइन भगवान से काशी के परिवार को जोड़ रही थी। काशी ने स्टोव जलाया और सब्जी गर्म करने लगा। वह सुबह ही दोनों समय का खाना बना जाता। गुंजा

मदद करती पर वह भी तो छोटी थी फिर स्कूल भी जाती। कैसे उस पर सारा काम छोड़ देता।

गुंजा की मां को गुजरे अभी साल ही हुआ था पर तब से गूंजा बहुत समझदार हो गई थी। काशी अस्पताल से लगी बस्ती में एक खोली में रहता था। वहां के बहुत से लोग इस अस्पताल में काम करते। सफाई कर्मी, नर्स, ड्राइवर थे। काशी मुर्दाघर में काम करता था। जब वह उसे बस्ती में आया बेरोजगार था पत्नी और छोटी बच्ची के साथ गांव छोड़ शहर चला आया था। पढ़ा लिखा कम ही था। गांव का ही एक परीचित जो यहां अस्पताल में काम करता था उसने काशी की नौकरी साफ सफाई में लगवा दी, मुर्दाघर में। मुर्दाघर में नौकरी की बात सुन काशी की पत्नी बहुत बिगड़ी –

"गुंजा के बापू क्या यही काम मिला तुम्हें शहर में, गांव भी छुड़ा दिए। कहे थे कि शहर में पैसा कमाएंगे। हम कहीं-कहीं खेत में मजदूरी कर कुछ तो कमा लेते थे, अब यहां कहां जाएं किस पर विश्वास करें। यहां की भीड़ में तो दम घुटता है। कुछ दूसरा काम नहीं है क्या तुम्हारे लिए"।

"तुमको क्या लगता है कि मैं काम नहीं ढूंढ रहा, बहुत कोशिश की, या तो मजदूरी मिलती है या घर बैठो। मजदूरी भी मिली तो, नहीं तो फाका करना पड़ेगा। यहां कम से कम बंधी पगार तो मिलेगी और सफाई तो करनी है सुबह शाम।"

"बस! तुम्हें डर नहीं लगेगा",

"काहे का डर, पेट की आग में सब जल जाता है और डरना है तो इन जिंदा लोगों से डरो वहां तो सब मरे रहते हैं, सारे मरे लोग।"

उस दिन से काशी मुर्दाघर में सफाई करने लगा था। सारा दिन लाशों से घिरा रहता। फिनायल और फॉर्मलीन से कमरा महकता रहता। कमरे में दो बड़े-बड़े पंखे लगे थे जो अंदर की हवा बाहर फेंकते। सारा दिन पंखों की आवाज कमरे में ती रहती। मुर्दाघर की शांति में वही आवाज थी जो काशी को उसके जिंदा होने का अहसास कराती। वह तो सारा दिन लाशों के बीच गुजारता था, तो सन्नाटे को चीरती पंखे की आवाज के साथ उसे अच्छा लगता। धीरे-धीरे उसे आदत हो गई थी। काम करते-करते तीन चार साल निकल गए अब उसे मुर्दा घर में लाशों की व्यवस्था का काम भी दे दिया गया था। सीनियर लोग अब बाहर बैठे रहते। उसे काम पर लगा देते।

आज उसके सीनियर को छुट्टी लेना था तो वह बोला

"काशी आज रात की शिफ्ट तुम कर लेना, मैं बाहर हूं"।

"पर मामा तुमको तो पता है मैं रात शिफ्ट नहीं कर पाता घर में गूंजा अकेली रहती है "।

"देख लेना एक दिन काशी, वैसे रात के समय तुम्हारी शिफ्ट नहीं लगाता हूं पर आज कुछ जरूरी काम है "।

"ठीक है"

काशी लकड़ी की कुर्सी पर बैठ गया। जब से गूंजा की मां मरी थी काशी रात पाली करने से बचता। घर में गूंजा अकेली रहती कब तक वह उसे किसी के भरोसे छोड़ता। खैर भरोसा तो किसी पर नहीं। गुंजा की मां ने भी तो जीने मरने की कसमें खाई थी उसके साथ, पर वह भी तो चली गई उसे छोड़कर। इसी जगह तो आई थी वहां लाश बनकर आखिरी बार। वह तो काशी उसके हाथ के गोदने से पहचाना था गुंजा की मां को, काशी वह दिन कभी नहीं भूल पाता जब एक साथ अनेकों लाशें आई थी यहां पर। रखने की जगह नहीं बची थी। एक के ऊपर एक कचरे सी भर दी गई थी लाशें।

कोई ट्रेन हादसा हुआ था हजारों लोग मरे थे, गुंजा की मां भी इसी ट्रेन में मायके जा रही थी। वह सुबह ही बैठाकर आया था उसे। गूँजा की मां भी बैठते हुए बोली

"कल सुबह वाली ट्रेन से आ जाऊंगी, गुंजा का ध्यान रखना"।

काशी को क्या पता था कि गुंजा की मां को आखिरी बार विदा कर रहा है। ट्रेन हादसा अगले स्टेशन पर ही हो गया इसलिए बहुत सारी लाशें इसी मुर्दा घर में पहुंचा दी गई थी। काशी जब सब लाशों को व्यवस्थित कर रहा था तब एक महिला की लाश के हाथ पर उसे गोदना दिखा इस पर लिखा था काशी'। काशी ने तुरंत लाश का चेहरा उघाड़ कर देखा। यह गुंजा की मां थी लावारिस स्थिति में। तड़प उठा वह, गया तो था उसे ढूंढने, सब जगह ढूंढा भी, पर जब उसे पता लगा कितना ढूंढा था उसने पर गुंजा की मां कहीं नहीं मिली। उसे विश्वास ही नहीं हो रहा था कि वह इस अवस्था में मिलेगी उसे तो पूरा भरोसा था कि उसे कुछ नहीं हुआ होगा वह जिंदा होगी इसी विश्वास में वह वापस लौट आया था पर आज गुंजा की मां की लाश ने उसके विश्वास को तोड़ दिया था। वह ना रो पा रहा था, ना कुछ

बोल पा रहा था। गुनजा की मां की लाश इस लाशों के देर में से एक लाश थी। उस दिन के बाद से वह भी तो एक लाश बन गया था। एक जिंदा लाश जो भावनाएं रखती थी सोचती थी सांस लेती थी पर शायद जिंदा ना थी। मुर्दाघर का वातावरण बहुत शांत था सभी मुर्दे अपनी-अपनी जगह सोए पड़े थे। बस सब की पहचान उन पर लगे टैग थी जो उनकी बारी के आने पर हटा दिए जाते। कई बार तो किन्हीं मुर्दों का अंतिम संस्कार नगर पालिका वालों को ही करना पड़ता क्योंकि इन्हें लेने कोई नहीं आता तब काशी को लगता कि यह दुनिया शायद मर ही गई है सारे मुर्दे बस नाम के लिए जिंदा है सारी भावनाएं शून्य हो गई है हमारे लोगों का अंतिम संस्कार तो पुण्य का काम माना जाता है पर यहां तो इन मुर्दों के अपने ही इन्हें लेने नहीं आते, सब पड़े हैं। बाहरी लोग मुर्दाघर के बारे में तरह-तरह की बातें बनाते हैं कोई कहता है या भूत है कोई कहता है कि यहां डरावनी आवाज आती हैं पर काशी को कभी कुछ महसूस नहीं हुआ वह तो सुबह से शाम तक यही रहता कभी-कभी काम ज्यादा रहता तो कभी बैठे-बैठे पूरा दिन निकल जाता वह लाशें व्यवस्थित करता रहता वे उसे अपनी सी लगती बेचारी सब बेबस थी पड़ी हुई थी की कोई उन्हें संभाले। मुर्दाघर में आई उन लाशों की खबर लेने के लिये आये दिन कोई न कोई आता रहता। कभी कभी तो एक लाश के कई दावेदार आ जाते और कभी बेचारी अपनी बारी के इंतजार में सफेद चादर में पड़ी रहती।

उस ट्रेन हादसे के बाद कितने ही पुलिस वाले और कितने ही रिपोर्टर रोज काशी के पास आय रिपोर्ट बनती, लाशों की गिनती होती। कोई कुछ संख्या बताता, कोई कुछ।

कोई हादसे को छिपाने की कोशिश में कम से कम मृतक संख्या बताता, कोई गिनती से ज्यादा। सारी लाशें निःशब्द थी, क्योंकि वे मरी हुई थी।

❑❑❑

फगुआ

दीदी, ओ दीदी! होली का फगुआ दे दो। दीदी ओ दीदी....

एक मर्दाना आवाज सुबह-सुबह मेरे कानों में पड़ी। इतवार का दिन, सुबह 8:00 बजे थे। वैसे भी इतवार छुट्टी के लिए जाना जाता पर हम जैसे नौकरी-पैशा लोगों के लिए यहां आम दिनों से ज्यादा काम भरा होता। सप्ताह भर के बचे काम एक ही दिन में निपटने की कोशिश करती। छुट्टी का दिन था मैं अखबार और चाय का कप लेकर बैठी ही थी। होली आने वाली थी फागुन और बसंत ने हल्की ठंड और दोपहर गर्म करना शुरू कर दिया था। सुबह-सुबह उसकी आवाज सुन मुझे बहुत खीज आई। मैं अंदर से ही चिल्लाई

"कौन है?", "दीदी ओ दीदी, होली का फगुआ "

आवाज फिर आई।

"अभी तो होली में 15 दिन है" मैं उसे टालना चाह रही थी।

"दीदी ओ दीदी" आवाज फिर आई।

मुझे ना चाहकर भी उठकर जाना पड़ा क्योंकि पति देव बड़बड़ाने लगे थे। उनकी भी सुबह की नींद खराब हो रही थी। मैं बडबडाते हुए बाहर निकली देखा, मेन गेट पर कोई लड़का खड़ा था उसका सर दिख रहा था। गेट की ऊंचाई ज्यादा होने के कारण सिर्फ उसके बाल दिख रहे थे।मैं गेट खोल बाहर आई, उसे देख अचंभित रह गई। यह तो हिजड़ा था। उसके बाल

लड़को जैसे कटे हुए थे, पर श्रृंगार औरतों सा कर रखा था। नाभी दर्शना लाल साड़ी जिस पर नेट का आस्तीन वाला ब्लाउज पहना था। उसका चेहरा खूब सारे फाउंडेशन से भरा, भूरा हो चुका था। माथे पर चमकीली बिंदी और होठों पर लाल लिपस्टिक होटो को और मोटा दिख रही थी। उसकी कदकाठी भी किसी हष्ट पुष्ट आदमी सी ही थी। पहली नजर में तो मैं उसे पहचान ही नहीं पाई पर मैं बस उसे एक टक देखे जा रही थी। मेरे मन की खींज ना जाने कहां दब गई। मन मस्तिष्क शून्य सा हो गया। बाहर लोग मॉर्निंग वॉक पर निकल रहे थे। कुछ लोग मुझे अभिवादन भी कर रहे थे पर मैं तो ऐसे जड़ हो गई थी कि किसी की का जवाब तक नहीं दे पा रही थी।

वह फिर बोला "दीदी, दीदी! और कंधे पर टंगे पर्स में से मोबाइल निकाल किसी को फोन लगाने लगा। उसके एक हाथ में उंगलियों के बीच 10-10-20 50-50 के नोटों की गड्डियां फसी हुई थी। वह अमूमन 40-45 के बीच की थी। "दीदी, फगुआ! होली आ रही है",

"हां! लाती हूं"

पता नहीं उसके चेहरे में क्या सम्मोहन था कि मैं मशीन सी घर के अंदर आ गई। कमरे में आकर पर्स टटोलने लगी।

"कौन है?"

पति ने उठते हुए कहा।

"फगुआ मांग रहे हैं"

"अभी! इतनी सुबह, समय भी नहीं देखते हैं यह लोग",

"हां "

मैं बस पैसे ढूंढने में लगी थी।

उसका चेहरा बार-बार मेरी आंखों के सामने घूम रहा था। ऐसा लगता था जैसे मैं उसे मिल चुकी हूं। उसे कहीं देखा हो। कुछ पैसे और एक साड़ी लेकर मैं बाहर चली आई। वह वहीं खड़ी थी। किसी से बात कर रही थी। उसका हर अंदाज मुझे जाना पहचाना सा लग रहा था।

मैंने ना चाहते हुए भी उससे पूछ लिया" तुम्हारा नाम क्या है?"

पहली बार उसने मुझे देखा, नहीं तो अभी तक उसके अलग ही हाव-भाव दिख रहे थे शायद वह भी मुझे पहचान गई थी अनजान बन इधर-उधर ध्यान लगा रही थी

मेरे पूछने पर वह बोली "सोना".....

"अच्छा" मैं बोली।

"कानपुर से हो?"

"नहीं!

"फिर ?"

"आगरा"

"अच्छा" हम एक दूसरे को देख रहे थे।

उसकी आंखों में पानी की लकीर तैर गई।

"तनु, तनु दीदी".... वह बोली।

मैं भी उसे पहचान गई। वह सोनू था मेरा सोनू.....

में चिल्ला पड़ी "तुम सोनू हो"

इस तरह उसकी आंखें बरसने लगी साथ ही मेरी भी। उसकी आंखों में लगाया मोटा काजल आंसुओं में मिलकर गालों पर बहने लगा। अपनी उम्र को छुपाने के लिए लगाया फाउंडेशन भी काजल और पानी के साथ मिलकर बह गया। उसका चेहरा और भयावह दिख रहा था। मैं उसे हाथ पकड़ कर अंदर ले आई। कॉलोनी के लोग हमारे इस व्यवहार को तमाशा बना कर देख रहे थे। मैंने पोर्च में पड़ी कुर्सी पर उसे बिठाया और अंदर आ गई। रुलाई तो मुझे भी बहुत आ रही थी पर मैं जैसे तैसे अपने आप को संभाले हुए थी।

सोनू हमारे घर काम करने वाली दीदी का बेटा था। घर के पीछे बने सर्वेंट क्वार्टर में ही वह रहते थे। जब दीदी को सोनू होने वाला था तब से वह हमारे घर काम करने लगी थी। मां ने उसकी बहुत मदद की। सोनू के पैदा होने के बाद भी दीदी यहीं काम करती रही। सोनू को भी वह हमारे घर ले आती। हम सभी भाई-बहन उसे खिलाते, उसके साथ खेलते। सोनू धीरे-धीरे बड़ा हो रहा था। वह हमारे परिवार का सदस्य ही बन गया था। बचपन से वह शर्मीले स्वभाव का था। बहुत कम बातें करता। कुछ लड़कियों से नाजुक्ता भी थी उसमें। मोहल्ले में भी किसी के साथ नहीं खेलता। हम भाई बहनों तक ही उसकी दुनिया सिमटी थी। मेरी मां ने हमारे स्कूल में ही उसका दाखिला करवा दिया। जैसे-जैसे वह बड़ा हो रहा था उसका लचीलापन बढ़ते जा रहा था। स्कूल में बच्चे उसे छेड़ते मीठा-मीठा कहते हैं।

वह मुझसे पूछता" दीदी, मीठा क्या होता है"

मैं भी क्या कहती, यह उसका भोलापन था या शायद दुनिया की रफ्तार में वह भाग नहीं पा रहा था। वह स्कूल जाने में भी आनाकानी करता। जबरन भेजो तो लड़कर आ जाता। मैं सभी भाई बहनों में बड़ी थी मेरी शादी हो गई। कुछ दिन तक तो माँ से सोनू के समाचार मिलते रहे फिर एक दिन पता चला कि वह घर से भाग गया। माँ से हुई बात में शुरुआत में सोनू का जिक्र और चिंता रहती है फिर धीरे–धीरे सभी उसे भूलने लगे। सोनू की मां भी धीरे–धीरे अशक्त हो गई और सर्वेंट क्वार्टर तक ही सिमट कर रह गई थी। कभी कभी मैं मायके आती तो उनसे मिलती, वह सोनू की याद करती रहती। मैं भी शादी के बाद नौकरी और घर की व्यवस्थाओं में इस कदर उलझी की दुनिया से कट्ती चली गई। आज सोनू को देख फिर वह अतीत फ्लैसबैक सा घूमने लगा। सोनू में इतना खो गई की दूध जलने की बदबू से मैं होश में आई। किचन के स्टैंड पर दूध उबल कर फैल चुका था। पूरी गैस दूध से भर गई। मैं पता नहीं कहां थी, दिमाग सुन्न सा हो गया था। दूध पतीले से उबल उबल कर गिर रहा था, और मैं उसे देख रही थी। पर हाथ गैस बंद नहीं कर रहे थे। दिमाग कुछ काम नहीं कर रहा था। दूध की बदबू पूरे घर में फैल गई। पति, बच्चे सब जाग गए। पति वहीं से बड़बड़ कर रहे थे।

"एक दिन छुट्टी का मिलता है, उसमें भी आराम नहीं। सुबह से खतर–पटर शुरू हो गई। क्या हो गया प्रिया, दूध जला दिया क्या?"

"हां!गिर गया थोड़ा" मैं सचेत हुई।

जल्दी से गैस बन्दकर बाहर भागी। सोनू वहीं बैठा था।

मुझे देख बोला "कहां रह गई थी दीदी?, मैं उठने ही वाला था"

"सोनू चाय पियोगे पुदीने वाली" वह मुझे देखने लगा। उसके चेहरे पर कितने भाव आए और चले गए। मैं उन्हें पढ़ने की कोशिश करती तब तक

वह बोला "हां, दीदी!बरसों हो गए पिए। अब तो चाय का असली स्वाद ही भूल गया हूं। जिंदगी ने इतना तजुर्बा दिया है कि मैं क्या हूं यह भी पता नहीं मुझे ",

"रुको, मैं बनाकर लाती हूं" कहकर मैं फिर किचन में आ गई।

पति की चाय छानकर फिर पूरी चाय में पुदीने की पत्तियां डाल दी। आज मैं भी बरसों बाद यह खुशबू महसूस कर रही थी। चाय के साथ उबल

रही पुदीने की पत्तियां कभी ऊपर आती तो नीचे चली जाती। चाय के गंदले रंग में वह हरी पत्तियां नाचती सी दिख रही थी। शायद वह जिंदगी की उतार चढ़ाव को दिखा रही थी। मैंने दो कप भरे और पोर्च में आ गई। एक कप सोनू को पकड़ा पास कुर्सी पर बैठ गई। सोनू चाय सूंघ रहा था। मैं आश्चर्य से उसे देख रही थी। उसकी आंखों से फिर आंसू बह निकले अपनी साड़ी के पल्लू से उसने आंखें पोंछी बोला

" दीदी यह खुशबू पता नहीं कहां खो गई थी। कितना ढूंढा मैंने उसे, पर उसे खोज में मैं अपने आप को ही खो बैठा। आज आपके सामने जो सोनू है इसकी कल्पना भी आपने नहीं की होगी। जीवन की दौड़ में भागते-भागते मैं यहां आ गया जिसकी कल्पना भी मैं ने नहीं की थी"।

वह शून्य में देख रहा था। मैं भी उसे सुनना चाहती थी। तभी अंदर से बर्तन बजने की आवाज आई। मैंने सोनू से कहा

"तुम मुझे पास के कॉफी हाउस में मिलोगे दोपहर में"

"क्या हुआ दीदी, तुमसे बहुत सारी बातें करना है",

"मैं जरा घर के काम निपटा लूं फिर मिलती हूं तुमसे"

कहकर मैं खड़ी हो गई सोनू शायद समझ रहा था कि मैं उसे टालना चाह रही थी पर मैं रविवार का दिन और काम की अधिकता में फंसी थी। वह भी खड़ा हो गया हाथ का कप टेबल पर रखते हुए बोला

"ठीक है दीदी वैसे भी हम जैसे लोगों को कौन अपने घरों में बैठता है। आपने प्यार से बुलाया तो आ गया। आपसे और पुदीने की चाय से रिश्ता जो है"।

"तुम आओगे ना?"

उसने कुछ नहीं कहा, बस मेरी आंखों में देखा। उसकी आंखों में मुझे इतनी गहराई दिखाई दी जिसमें डूबने से मैं बचना चाह रही थी। उसके सपाट चेहरे पर एक बेचैनी थी जो मेरे सामने आना चाह रही थी। मैं भी चाहती थी उसका अतीत जानना पर मैं भी फंसी थी। सोनू चला गया बिना कुछ बोले। मैं भी जल्दी से दोनों कप उठाकर किचन में आ गई। वैसे तो हर छुट्टी के दिन मैं आराम से काम करती, घर के कुछ अतिरिक्त काम भी निकाल लेती पर आज सिर्फ जरूरी काम ही मेरी प्राथमिकता थी। बच्चे सब अपने अनुसार उठे। मैं चिल्लाती जा रही थी जल्दी करो, काम निपटाओ। वे लोग

मुझे घूर रहे थे की छुट्टी के दिन मुझे क्या हो गया।

सारे काम निपटाकर बाजार जाने का कहकर में कॉफी हाउस पहुंच गई। मोहल्ले के चौराहे के कोने पर ही कॉफी हाउस था। पर उस तक पहुंचने में मुझे लगा जैसे कब से चल रही हूं। ऐसा लग रहा था जैसे हर चेहरा मुझे घूर रहा हो। हमेशा मैं वहां से निकलते समय जान पहचान वालों से बोलती पर आज मुझे मंजिल तक पहुंचने की जल्दी थी। कॉफी हाउस में जाकर मैं कोने वाले टेबल पर बैठ गई। इसके पहले मैं कभी ऐसे अकेले नहीं आई। दिल जोर-जोर से धड़क रहा था। दोपहर का समय था तो ज्यादा भीड़ नहीं थी। कहीं-कहीं इक्का दुक्का लोग बैठे थे। पूरे हाल में पीले सफेद रोशनी के लालटेन जैसे बल्ब लटक रहे थे। हवा में लोगों के लगाए परफ्यूम की मिली जुली खुशबू फैली थी। हाल के कोने में बड़े टेबल पर कुछ युवा बच्चे किसी साथी का जन्मदिन मना रहे थे केक काटा गया। फिर जिसका जन्मदिन था उसके चेहरे पर चुपड़ दिया गया। ऐसी बर्बादी देख मेरा दिमाग खराब हो गया पर आजकल यही चलन है किसी को टोकना गुनाह है। इतनी देर में मैं संभल चुकी थी। वेटर टेबल पर पानी और मैनू रख गया। मैं मेनू पलटने लगी। मेरा मन नहीं लग रहा था। बार-बार दरवाजे की ओर ध्यान जाता। पर्स में से मोबाइल निकाल कर देखा, पूरे 20 मिनट से यहां बैठी थी। क्या सोनू नहीं आएगा मुझे उसकी आंखें याद आ गई कितने सवाल कितनी बात थी उनमें। वह बताना चाहता था पर घर में पति का डर था वह वैसे भी सुबह से खींजे हुए थे यदि मैं सोनू के पास बैठ जाती तो वह फिर गुस्सा होते कि तुम फिर समाज सेवा में लग गई हालांकि एक दो बार मैंने सोनू का जिक्र किया था उनसे, पर कोई वजह नहीं थी कि उसे याद रखा जाए। मुझे लगा अब वह नहीं आएगा तो मैं भी चलने की तैयारी में ही थी दरवाजे पर मुझे सोनू दिखा। आज वह उसके पुराने रूप में ही था। जिसमें मैं उसे पहचानती थी। वह शर्ट पैंट पहन कर आया था बिना किसी मेकअप के वह साधारण लड़का लग रहा था। बस उसके हाव-भाव लड़कियों से थे जो बचपन से ही उसके व्यवहार में थी। जैसे ही वह अंदर आया हाल में बैठे सभी की निगाहें उस पर टिक गई। हाल के दरवाजे पर खड़े होकर उसने चारों ओर देखा मैं कोने वाले टेबल पर बैठकर हाथ हिला रही थी।मैंने उसे इशारा किया, सोनू उन्हीं लचक के साथ चलता हुआ मेरे सामने वाली कुर्सी पर बैठ गया। मैं

उसे लगातार देख रही थी यह तो कितना बदल गया है वह सोनू तो अलग था क्या उसने अपने आप को ऐसा कर लिया है। ना जाने कितने सवाल मेरे मन में घूम रहे थे। कॉफी हाउस के लोगों की निगाहें हमारी ओर ही थ। जन्मदिन मनाने वाले बच्चे भी एक जगह बैठ हमारी ओर देख रहे थे। वह सोनू को देख हंस रहे थे और अजीब इशारे कर रहे थे। सोनू उनकी तरफ पीठ कर बैठा था। मैं सामने थी मैंने सोनू को देखा उसने बड़ी नजाकत से पानी का गिलास उठाया घुट घुट कर पिया फिर पेपर नैपकिन से धीरे से मुंह पोंछ कर टेबल पर रख दिया। उसका यह बर्ताव मुझे अजीब लग रहा था। कुछ देर में वेटर हमारी टेबल पर आ गया।

"मैडम, ऑर्डर प्लीज"

"सोनू क्या लोगे"

"मैं तो कुछ नहीं खाऊंगा"

"कुछ पी लो"

"अच्छा फिर कोल्ड कॉफी मंगा लो"

वेटर सोनू को देख मुस्कुरा रहा था। सोनू ने फिर उसी अंदाज में उसके हाथ पर चपत लगा दी और शर्मा गया।

"हां दीदी क्यों बुलाया है यहां। तुमको तो फुर्सत ही नहीं थी, उस दिन"

"सोनू मैं तुमसे इत्मीनान से बात करना चाहती थी। बस अब तुम बताओ कि तुम ऐसे क्यों हो गए, जानकर या कोई कारण से"

मैं उसके चेहरे को देख रही थी उसके चेहरे पर कितने भाव आ जा रहे थे। आंखों में पानी की लकीर आ गई उसने टेबल पर रखी नैपकिन से आंखें पोंछी।

"दीदी!....

उसके एक-एक शब्द मुंह से निकलने के लिए लड़ रहे थे जैसे कितने दिनों से दिल की सलाखों के बीच कैद हो और आज उन्हें रिहाई मिलने वाली थी।

"दीदी, इस दुनिया ने मुझे क्या से क्या बना दिया। मैं आज जो हूं वह जानकर नहीं बना। बस लोग मुझे इस तरफ धकेलते गए और मैं इस दलदल में फसता गया"।

"तुम तो घर से चले गए थे ना",

“हां दीदी, चला गया था। स्कूल में मुझे बच्चे चिढ़ाते थे। मैं उनके जैसा नहीं था। लोग मुझे मीठा कहते। मैंने आपसे एक बार पूछा भी था। एक दिन गुस्से में मैं उन लड़कों से लड़ लिया वह भी मुझे मारने लगे तो मैं स्कूल से ही भाग गया। एक दो दिन पास के गांव में छिपा रहा फिर एक ढाबे वाले के यहां काम मांगा तो उसने मुझे वहां रख लिया। कुछ दिन तो अच्छे निकले फिर एक दिन रात के सोते समय मुझे शरीर पर कुछ रेंगता सा महसूस हुआ मैं पलट कर सो गया। ढाबे का मालिक मेरे साथ सोता था।मुझे प्यार से रखता। मुझे भी लगता कि मुझे बच्चा मानता होगा। फिर एक दिन मुझे पीछे से कुछ चुभता हुआ लगा। मैंने घबरा कर देखा वह ढाबे का मालिक था। उसने मुझे दबोच लिया मैं कसमसा उठा। विरोध नहीं कर पाया वह मेरा आश्रयदाता था। फिर तो हर तीसरे चौथे दिन यही सिलसिला चल पड़ा। मैं असहाय था। एक दिन मैंने उससे कहा भी कि मुझे बहुत दर्द होता है तो उसने मुझे कुछ खिलाकर चुपचाप सुला दिया। अब तो ढाबे पर आने वाले ट्रक वाले भी खाने के साथ मेरा भी भुगतान करते। मैं रंडी बन गया था, आदमी रंडी। जैसे लोग उनसे पेश आते हैं वैसे मुझसे भी आते। मैं दर्द से तड़पता लोग मुझे नशे में कुचलते अपनी हवस मिटाते और चले जाते। मैं भी ढाबे वाले की दवा खाकर सो जाता। मैं भी थक गया था।

एक दिन मैं वहां से भाग निकला। पता नहीं किसी का ट्रक खड़ा था ढाबे पर उसी में जाकर छिप गया। रात के अंधेरे में मुझे लगा कि मैं इस अंधेरी जिंदगी से दूर भाग जाऊंगा। सुबह आंख खुली तो अपने को किसी बड़े शहर में पाया। वही उतरकर नई शुरुआत करने की ठानी। शहर क्या बस लोगों की भीड़ का मेला था, चारों ओर लोग, शोर, कुछ देर तो मुझे समझ ही नहीं पड़ा। फिर थोड़ा संभल कर आगे बढ़ा कुछ दुकानों पर गया कि कुछ काम मिल जाए। सभी मुझे नकार देते, कुछ ने तो यहां तक कहा की मेरे लायक कोई काम नहीं उनके यहां। मैं दो दिन भटकते रहा। ढाबे वाला मुझे पैसे नहीं देता था उसे डर था कि मैं भाग ना जाऊं। मुझसे उसकी सारी जरूरतें पूरी हो रही थी। मैं भूखा प्यासा भटक रहा था। आंखों के आगे अंधेरा छाने लगा। जब होश आया तो मैं किसी होटल के कमरे में था बिना कपड़ों के। कुछ देर में एक महिला कमरे में आई उसके साथ दो आदमी भी थे, मुझे देख मुस्कुराती हुई बोली

"कैसे हो?"

मैं कुछ समझ पाता कि इसकी मेरा सर घूमने लगा। जब होश आया तो मुझे फिर वही दर्द महसूस हुआ जो मैं ढाबे में छोड़ आया था। मुझे मेरी किस्मत फिर वही लाकर खड़ा कर रही थी जहां से मैं भाग गया था। वह औरत फिर आई मेरी और देख बोली

"काम करोगे मेरे साथ?"

मेरे पास और कोई रास्ता भी नहीं था। मैं अब हाई प्रोफाइल कॉल बॉय बन गया था। महंगी गाड़ियों में चलने लगा औरतें मुझे अपने अकेलापन दूर करने के लिए बुलाती और आदमी अपनी हवस मिटाने के लिए। मुझे लगने लगा था कि शायद मैं इसीलिए बना हूं जिस काम को करने से मैं घबराता था वही मेरा पेट भर रहा था। मैं करोड़पतियों के साथ रहता उनके रातें रंगीन करता कभी-कभी मुझे समझ नहीं आता कि मैं कौन हूं आदमी हूं औरत हूं या फिर........।

धीरे-धीरे मेरी उम्र बढ़ रही थी लोगों की अपेक्षा वैसे ही थी। लोग मुझे नकारने लगे। मैं बूढ़ी तवायफ जैसा हो गया था जो बाजार में नहीं चलती। मैं महसूस कर रहा था कि अब मैं किसी के काम का नहीं रहा। एक दिन मैंने सिग्नल पर किन्नरों को मांगते देखा। उसमें कहीं ना कहीं मुझे मेरी ही झलक देखी। तब से मैंने भी अपने आप को उनकी टोली में शामिल कर लिया। मेरी आप बीती सुन उन लोगों ने मेरा साथ दिया।

सोनू ने इतना कहा और सामने रखा पानी का गिलास उठाया और एक सांस में पी गया। ऐसा लग रहा था जैसे उसके मन में लगी आग पर पानी डाल रहा हो। उसने हाथ में दबाई नैपकिन से होंठ पहुंचे और गिलास के नीचे नैपकिन को दबा दिया। अब वह शांत बैठा था और मेरी और देख रहा था।

मैं भी सोनू के बचपन से मेरे सामने बैठे अधेड़ सोनू की यात्रा को उसके चेहरे पर पढ़ रही थी।

तभी वह बोला "दीदी अब तो दोगी ना फगुआ".......।।

❏❏❏

कठपुतली

"पलासिया, पलासिया"

आवाज लगाता बिहारी खोली के बंद दरवाजे की सांकल बजा रहा था।

"आई'"

पलासिया स्टोव की लौ धीमी कर दरवाजा खोलने दौड़ी। अंदर आ बिहारी ने पीठ पर टंगी पोटली खूंटी पर टांगी और नल पर जाकर हाथ पांव धोए।

"चल जल्दी से खाना लगा दे आज तो पूरा दिन निकल गया"

वह चटाई बिछा वही स्टोव के पास ही बैठ गया। पलासिया ने थाली में भात दाल और प्याज परोस दिया। बिहारी जल्दी-जल्दी खाने लगा। कुछ देर में पलासिया की ओर देख बोला-

"तूने खाया"

"अभी नहीं"

"तो खा ले"

" हां" कह कर पलासिया भी थाली परोसने लगी।

" इस बार के मेले में अच्छी कमाई हो जाए तो नई कठपुतलियां लूंगा, सब बेकार हो गई है किसी के कपड़े फट गए हैं किसी की चुनरी तो किसी के धागे ही टूट गए हैं बड़ी परेशानी होती है खेल दिखाने में। तुझसे कहा था ना कि वह रानी वाली ठीक कर देना, कर दी नहीं"

"नही"

" क्यों"

" अब कहां सिल्लू जगह ही नहीं बची हर जगह तो सिल चुकी हूं, जहाँ धागा लगाओगे कपड़ा फट जाता है"

" हां वही तो सब पुरानी हो गई है" बिहारी भात खाते हुए कठपुतलियों के बारे में सोच रहा था। नए कपड़ों की बात सुन पोटली में बैठी कठपुतलियां खुश हो रही थी। कमरे में एक बल्ब जल रहा था जो सबके लिए उजाले का माध्यम था। जिसमें बिहारी की कठपुतलियां और कठपुतलियों के नए कपड़े चमक रहे थे।

बिहारी 32 साल का नौजवान था। पिता कठपुतली का खेल दिखाते थे। उनके साथ गांव-गांव शहर शहर घूमता। उसे माँ की सूरत याद नहीं पर ये कठपुतलियां उसे माँ सी लगती। कठपुतलीया भी उसे मां सा प्रेम करती। दोनों पिता-पुत्र खानाबदोश से जगह-जगह घूमते जहां रात होती वहीं बसेरा कर लेते। पिता के साथ बिहारी ने भी कठपुतली का खेल सीख लिया था। अब वह पर्दे के ऊपर से वह भी धागे में बंधी कठपुतलियां नचाता। नई कहानियों को गानों के रूप में सुनाता। लोग बड़े चाव से उसका खेल देखते हैं।

ऐसे ही एक दिन घूमते घूमते उन्हें शहर के बाहर पलाश के पत्तों पर एक बच्ची दिखी शायद किसी की अनचाही संतति थी। पिता ने उसे गोद में उठाया दूर-दूर तक उसका कोई खैरदार नहीं था, तो अब वह पिता और बिहारी के पलासिया हो गई थी। पलासिया भी बिहारी के साथ बढ़ने लगी। पिता ने अब घूमना छोड़ स्थाई ठौर बनाया। बच्ची को लेकर कहां कहां घूमते। तो अब कठपुतलियो का भी स्थाई निवास हो गया था। खोली के पीछे वाला कमरा, सब वहां सजी बैठी रहती। पलासिया धीरे-धीरे बड़ी हो रही थी और पिता बूढ़े, अब बिहारी कठपुतलियों को ले जाता। कठपुतलियों को भी नया रूप में मिला था नए करतब मिले थे। एक दिन पिता भी माँ के पास चले गए। अब खोली में बिहारी पलासिया और कठपुतलियां इतने ही सदस्य थे।

पलासिया ने कठपुतली यो का कमरा बहुत अच्छा सजाया था। एक तरफ महिलाएं दूसरी तरफ पुरुष। राजकुमारी, दासी, महारानी, लैला, हीर सब एक बड़े बक्स से टिकी बैठी थी। और राजा, राजकुमार सेवक मजनू,

रांझा दीवार से सटे थे। दीवार की अलमारी में कठपुतलियों के कपड़े रखे थे। एक प्लास्टिक के डिब्बे में उनके गहने रखे थे। बड़े बॉक्स में पुरानी कठपुतलियां रखी थी जो किन्ही कारणों से खेल दिखाने में असमर्थ थी। कमरे की छत में लटका एक बल्ब था जो अपनी लाल की रोशनी से कमरे को रोशन करता। छत पर टीन में कहीं कहीं छेद हो गए थे, जिनसे सूरज की किरणें और हवा अंदर आती। कभी कभी कठपुतली आपस में बात भी करती "बिहारी से कहकर एक झरोखा बनवाऐ कम से कम थोड़ी हवा तो आए कमरे में", पर अभी तक किसी ने कुछ नहीं कहा था सब एक दूसरे को आगे धकेलने में लगे रहते बोलने के लिए।

बिहारी अभी-अभी आया और उसने कठपुतली की पोटली पीछे कमरे में उलट दी। सारी कठपुतलियां एक दूसरे के ऊपर गिर गई। खीजता हुआ बोला-

"पलासिया मैं जा रहा हूं एक-दो दिन में नया सामान लाता हूं फिर नई कठपुतलियां बनाऊंगा। सारी पुरानी और बेकार हो गई है आज तो सब धागा छुड़ाकर भाग रही थी। एक भी खेल नहीं जमा, सारी मेहनत बेकार हो गई सब के धागे खराब होने लगे हैं। पता है कमाई ही नहीं हुई "।

बिहारी ने टांड पर रखी संदूक उठाई उसकी धूल साफ की। सन्दूक उसकी मां की थी जिसमें मां की पुरानी चुनरी रखी थी और उसी में लिपटी बिहारी की जमा पूंजी। पैसे गिन वह संतुष्ट हो गया।

आज बिहारी बहुत उदास था खाना भी नहीं खाया। पलासिया भी मुंह लटकाए बैठी थी और कठपुतलियां तो बहुत दर्द में थी। सब एक दूसरे पर गिरी पड़ी थी बिहारी ने उन्हें कूड़े सा पटक दिया था। किसी के बाल उलझ गए थे किसी के कपड़े किसी का हाथ टूट गया था किसी की कमर। सब बिहारी का खेल बिगाड़ने पर दुखी थी पर करती भी क्या वह कितना कोशिश कर रही थी बिहारी का साथ देने का पर कभी धागा टूट जाता कभी कपड़े अटक जाते। खैर कुछ देर में कमरे में उजाला हुआ पलासिया ने बल्ब जला दिया था वह भी ढेर में पड़े कठपुतलियों को देख मुंह बिचका कर चल दी और जाते-जाते बल्ब भी बंद कर दिया। सब अंधेरे में करहाते हुए पड़ी थी।

सुबह बिहारी शहर चला गया। पलासिया भी घर के काम निपटाती

रही। सूरज चढ़ते चढ़ते सिर पर आ गया। कठपुतलियों की किसी ने सुध नहीं ली। उन्होंने काम जो ऐसा किया था सजा तो मिलनी थी। दोपहर बाद पलासिया कमरे में आई। सब आपस में कह रही थी पलासिया और बिहारी से माफी मांग लो नहीं तो अपनी खैर नहीं है। पलासिया ने सब को अलग अलग किया पर किसी के बाल टूट गए तो किसी का लहंगा फट गया। राजकुमार की तो शेरवानी के सारे मोती झड़ गए। वह रुआंसा सा हो गया। महारानी की गर्दन एक और लटक गई थी। हाथ पैर और कमर में लगे धागों के कारण बहुत उलझन हो रही थी इतनी की पलासिया तंग आ गई। वह उन्हें ऐसे ही छोड़ कर चली गई फिर रात हो गई और अंधेरा भी। महाराज, सेवक, राजकुमारी अभी भी उलझे पढ़े थे। महारानी को पलासिया ने दीवार के कोने में टिका दिया था ताकि उनकी गर्दन सीधी रहे। राजकुमार अपनी बिगड़ी शेरवानी के लिए रोता रहा सब अपनी हालत के लिए एक दूसरे को कोसते रहे। एक-दो दिन में पलासिया ने सब को अलग अलग कर दिया। राजा और राजकुमारी बुरी तरह टूट चुके थे जो बचे थे उनको पलासिया ने दीवार और बक्सों से टिका कर बैठा दिया। महारानी ने सब को बताया आज तक ऐसा नहीं हुआ बिहारी ने कभी ऐसा सलूक नहीं किया, वह परेशान है आखिर उसका जीवन ही हमसे हमें उस का साथ देना चाहिए। सबने एक स्वर में हां में हां मिलाई।

बिहारी शहर से आ चुका था वह बहुत खुश था। एक दोस्त की मदद से बहुत कम दाम में सामान मिल गया था और शहर के बड़े बाजार में जगह कठपुतली के खेल के लिए। उसने पलासिया को भी खुशखबरी सुनाई बहुत खुश हुई। शहर में यह पुरानी कठपुतली नहीं चलेगी सब नई कर दूंगा। सारे कपड़े सारा सामान नया लाया हूं पलासिया भी उसके साथ सब उलट पलट कर देख रही थी आखिर उसे भी तो बिहारी के साथ सारा काम करवाना था। रंगीन चुनरी, कुर्ते शेरवानी के टुकड़े, गोटे, कुंदन मोती, सितारे मजबूत डोरियां सारा सामान नया। बहुत खुश थी सब देखकर।एक दो कपड़े तो उसने अपने नए सूट के लिए रख लिया थे वह खुद ही सिलाई करती थी क्योंकि कपड़ों को सिलने की जिम्मेदारी उसी की थी। बिहारी और पलासिया अपनी बातों में लगे थे और कठपुतलियों के कमरे में हड़कंप मचा था। नई कठपुतलियों की बात उन्हें पता चल गई थी सब उदास थी।

अगले दिन से नई शुरुआत हुई बिहारी और पलासिया दिन भर नई-नई कठपुतलियां बनाते। पलासिया उन्हें सजाती, राजा और राजकुमारी नए बना लिए गए थे। दासी को भी नए बाल लगाकर नए लहंगा चुनरी बना कर ठीक कर लिया था। हीर रांझा को नए पंजाबी सूट पहनाए, लैला मजनू को भी नई पोशाक मिली। इस बार बिहारी घोड़े और हाथी वाली कठपुतलियां भी बाजार से लाया था जो राजकुमार की बारात में काम आती। सेवकों की संख्या भी बढ़ा दी गई। बिहारी ने परी और राक्षस भी बनाएं छोटे बच्चों के लिए गुड्डे गुड़ियों की कठपुतलियां बनाई। वह शहर की दुकान में यह सब देख कर आया था। शहर की नई दुकान नए खेल के साथ ही चलती ना। सब सुधर रहे थे पर रानी की किसी को सुध नहीं थी।वह दीवार के कोने में बैठी सब देख रही थी। उसकी गर्दन एक ओर लुढ़की पड़ी थी। बिहारी या पलासिया उस तरफ आते तो उसकी उम्मीद बन जाती है पर वे उसे लिए बिना ही चले जाते, उस पर ध्यान ही नहीं देते वह आवाज लगाते ही रह जाती। रात में जब बिहारी और पलासिया कमरा बंद कर चले जाते तो सब अपना नया रंग-रूप देख बहुत खुश होते। कोई अपनी चुनरी दिखाता तो कोई नया सूट, कोई गहने तो कोई नई पोशाक। जो अभी-अभी शामिल हुए थे उन्हें खेल के बारे में बताया जाता। सबके हाथ पैर और कमर में नई डोरियां बंधी थी। कैसे बिहारी के इशारे पर चलना है यह सब सीख रहे थे। रानी सब को देखते रहती सब कहते तुम्हारे कारण ही बिहारी का नुकसान हुआ तुम ही धागा छुड़ाकर भाग रही थी बार-बार। सब उसे कोस रहे थे पर उसने जानकर थोड़ी ना किया सब। धागे कमजोर हो गए थे आखिर पिता के समय के थे सब, बिहारी ने बदले ही नही। रानी सब को डबडबाई आंखों से देख रही थी। अपनी हालत पर उसे रोना आ रहा था।

अगले दिन बिहारी बड़े से बक्स में सारी नई कठपुतलियों को लेकर खेल दिखाने गया, रानी देखते रह गई। बिहारी एक एककर कठपुतलियों को उठाता और करीने से बक्स में रखता। उसे लगता अब उसकी बारी आएगी, उसकी बारी अब आएगी वह राह देखती रही और बिहारी बक्स उठाकर चल दिया। हां उसे क्यों ले जाता, वह तो टूटी पड़ी है उसने सोचा बिहारी जब उसे ठीक करेगा तब वह बहुत अच्छा खेल करेगी दिखा देगी कि वह रानी है। शाम को बिहारी बहुत खुश होता हुआ आया था

“आज बहुत अच्छा खेल हुआ, सब लोग बहुत खुश हुए देख यह ₹100 अलग से भी दिए हैं”। “मैंने आज आटे का हलवा बनाया है भाई”

दोनों भाई बहन ने पिता जी की तस्वीर के आगे भोग लगा कर खाना खाया। पलासिया ने बक्स से सारी कठपुतलियों को निकाल कर अच्छे से अलमारी में सजा दिया। राजा के बगल में नई रानी बैठी, बनी ठनी, इतराती हुई, नए तरीके से सजी हुई। बिहारी इस बार कठपुतली को रखने के लिए बिना दरवाजे की अलमारी ले आया था ताकि वे आपस में ना उलझे। जब पलासिया सब जमा कर चली गई तब नई रानी पुरानी से बोली

“अब तुम यहां क्या करोगी अब तो मैं आ गई हूं। आज नया खेल दिखाया हम लोगों ने, सब ने खूब तालियां बजाई। रानी बहुत दुखी हुई, यह ठीक नहीं मेरा क्या दोष था मैं तो उसकी सबसे पुरानी साथियों में से हु नई रानी ले आया वह। खैर सबका अंत है 1 दिन शायद मेरा भी होगा यह सोच वह चुप हो गई।

❐❐❐

मनौती

भारत विविधता का देश है यहा बहुत सारे तीज त्यौहार मनाये जाते हैं। हर त्यौहार किसी न किसी परम्परा और मान्यता से जुड़ा होता है। गणगौर भी मूलत: राजस्थान का त्यौहार है पर सीमावर्ती राज्यों में भी यह पूर्ण आस्था एवं विश्वास से मनाया जाता है। हम सभी किसी न किसी रूप में ईश्वर से कुछ न कुछ मांगते ही है एसी ही एक मानता की कहानी है......

रसोई घर चूल्हे की धुएं से भरा हुआ था। जमुना फुँकनी से लगातार चूल्हा फूंक रही थी। चूल्हे के साथ वाली दीवार में बनी छोटी सी खिड़की से धुंआ निकलने की कोशिश कर तो रहा था पर वही फंस कर रह जा रहा था। जमुना कभी फुँकनी से हवा करती तो कभी चूल्हे के अंदर जलती लड़कियों को खोरती। कितने ही प्रयासों के बाद भी चूल्हा सुलग नहीं रहा था। बाहर की गर्मी और अंदर चूल्हे की धुएं के कारण जमुना घबराकर बाहर आकर खड़ी हो गई। बाड़े में सूखी लड़कियां देखने लगी। दो दिन पहले आई बारिश ने सारी लड़कियां भिगो दी थी। खेत से लाये ज्वार के डंडे भी ठंडे हो गए थे। अभी तक खाना नहीं बना था। इसी बेचैनी में जमुना इधर-उधर घूम रही थी। तभी मनोहर आता दिखा। वह जल्दी से कुछ सूखे कंडे ले अंदर भागी। उसे डर था कि मनोहर जल्दी में होता है वह खाना मांगेगा। और सही में मनोहर बहुत जल्दी में था। उसने जल्दी से बाडे में पड़ी हौद में हाथ पैर धोए और रसोई में पहुंच गया। पाट बिछाकर बैठ गया। जमुना

फिर चूल्हा सुलगाने लगी। वह भी उनकी परीक्षा ले रहा था। मनोहर जमीन पर पड़ा तुरकाती का जला हुआ टुकड़ा उठाकर मिट्टी की जमीन को करोदने लगा। जमुना कभी मनोहर को देखती तो, कभी उस कुरेदी हुई जमीन को। उसे अपनी नानी की बात याद आई कि कालिख से लिखना नहीं चाहिये, अपशकुन होता है। उसने बोलने के लिये मुह खोला ही था कि मनोहर को अपनी ओर गुस्से में देखते पाया। जमुना सारे शब्द वहीं निगल गई। उसने जल्दी से परात में ज्वार का आटा लगाया और हाथ में बड़ी सी लोई लेकर चौड़ी की और कल्ले पर डाल दी। अब चूल्हा जल रहा था और लपटे कल्ले के दोनों और तरफ से उठ रही थी। आग की लपलपाती लाल लपटों में काले कल्ले पर पड़ी सफेद रोटी अपने आप को बचाने की कोशिश में चारों तरफ से सिंक रही थी, जैसे मनोहर और जमुना अपने जीवन में। जमुना ने सिकी रोटी उतार कर दूसरी कल्ले पर डाल दी। मनोहर की थाली परोस कर सामने रख दी। मनोहर चुपचाप रोटी खाने लगा।

" तुमने भैया जी से बात की"

"नहीं"

"फिर"

"करूंगा"

"कब",

"आज"।

जमुना ने खिड़की से बाहर देखा। धुएं की एक लकीर बाहर की ओर जा रही थी अब वह लड़ नहीं रही थी। मनोहर के आज को खत्म होने में आधा दिन बचा था। मनोहर खाकर उठ चुका था। जमुना ने उसी थाली में अपनी रोटी रखी और बची सब्जी से खाने लगी। मनोहर और जमुना जमीदार के यहां दिहाड़ी मजदूर थे। उनकी शादी को 5 साल बीत चुके थे। बच्चे की आस में दिन गुजरते जा रहे थे। इतने सक्षम नहीं थे कि डॉक्टरी इलाज कर सके। किसी ने कहा गणगौर माता की मानता कर लो शायद माता प्रसन्न हो जाए। उन्हें भी उम्मीद जाग उठी मानता कर ली। अब इस साल रथ बौढ़ाना था। रथ बौढ़ाना मतलब खर्चा। चाहे कितना भी कम करो पर करना तो था। गांव में तैयारी होने लगी थी। होलिका दहन से ही गांव में उत्सव का माहौल था। मनोहर के मन में भी कई दिनों से बात थी कि भैया जी

से बात करें पर हिम्मत नहीं जुटा पा रहा था। गांव में होली के दूसरे दिन से ही गवर पूजन शुरू हो चुका था। महिलाएं टोली बनाकर एक दूसरे के घर जाने लगी थी। जमुना भी कभी कबार चली जाती। उनकी बस्ती में सभी मजदूर वर्ग के लोग थे पर त्यौहार तो सभी एक से होते। हां तैयारी हैसियत के हिसाब से होती। कोई गुड़ का भोग लगता तो कोई शुद्ध घी के हलवे का, कोई मिट्टी की गणगौर बनता है तो कोई बाजार से बनावत। जमुना भी मन में उमंग लिए पड़ोस वाली जीजी के साथ गणगौर की तैयारी कर रही थी। उसे पूरा विश्वास था कि इस साल गौरा मैया उसकी गोद हरी कर देगी। होली की राख भी वह साथ जाकर लाई थी। उधर भैया जी के घर भी गणगौर की तैयारी चल रही थी। जमुना के साथ की औरतें और भैया जी के घर की महिलाएं मूर्ति स्थापना के लिए मिट्टी लाने साथ ही निकली। बड़े घर की औरतें बाजे गाजे से आगे चल रही थी। टैंकर से सड़क पर पानी छिड़का जा रहा था। चुनरी की छांव की जा रही थी। उनके पीछे गांव की अन्य महिलाएं कीचड़ से सनी सड़क पर चल रही थी। सभी माता के गीत गा रही थी पर पहला स्वर आगे की टोली का ही होता। मिट्टी लाकर शिव–गौरी की स्थापना की गई अमीरों के घर सोने के पाट पर और बाकी जगह सामान्य ग्यारस के दिन होली की राख में गेहूं मिलाकर खड़े बनाए गए। भैया जी और जमुना के पड़ोस के घर माता की बाड़ी बोई गई। भैया जी के घर अपार संपत्ति थी तो उन्होंने 20 जोड़े की 40 कुरकई भरी। खूब सजावट, बिजली के बल्ब से कमरा सजाया। बहुत भीड़ धूमधाम से शुरुआत हुई। बाड़ी की सेवा करने के लिए पंडित नियुक्त किया गया जो बाड़ी में सेवा करता पानी छीटता। रोज बाड़ी खुलने पर दर्शन करने वालों की भीड़ उमड़ी रहती। एक दिन मनोहर और जमुना भी गए। जमुना के पास भेंट के लिए कुछ नहीं था, सो थोड़ी सी धानी बांध कर ले गई। पर पहरेदारों ने उन्हें दरवाजे से ही लौटा दिया।वे मायूस से घर आ गए।

"तुम भैया जी से बात करो ना",

"हां! आज करता हूं"

कह कर मनोहर भैया जी की घर की ओर चल पड़ा। भैया जी दालान में ही बैठे थे। वह सीधे उनके सामने जा खड़ा हुआ। भैया जी ऐसे अचानक मनोहर को सामने देख गुस्सा हो गए।

“कौन हो तुम, यहां कैसे चले आए? दरबान कहां गए... देखो पूरे दलान में कीचड़ कर दिया”।

भैया जी बहुत गुस्से में चिल्लाने लगे।

मनोहर सहम गया। तभी दो दरबान दौड़ते हुए आए मनोहर को पड़कर घसीटने लगे।

“ क्यों बे! तेरे को मना किया था ना, फिर भी नजर चुराकर अंदर घुस आया। मानेगा नहीं तो पिटेगा”

“भैया जी मेरी बात तो सुन लो, आप ही हमारे माई बाप हो” मनोहर गीड़गड़ाने लगा।

“रुको! बोलो क्या बात है”

मनोहर को रोते देखा भैया जी बोले। दरबार मनोहर को लेकर वहीं खड़े हो गए। बाड़ी के दर्शन के लिए लोग आने लगे थे। भैया जी उनका अभिवादन करते जा रहे थे और मनोहर को देख रहे थे।

“भैया जी गणगौर में मुझे रथ बौड़ाना है मैंने और घरवाली ने मानता की थी।”

“हां तो मैं क्या करूं”,

“ कुछ पैसा मिल जाता तो कारज हो जाता”

“तू, तु रथ बौड़ाएगा “और भैया जी हंसने लगे। “तुझे पता है रथ बौड़ाने में क्या होता है। देवी देवता भी तुम जैसे कंगालों के घर नहीं आना चाहते। देख अपनी हालत। गणगौर की तैयारी, विधि विधान तू क्या जाने। देख मेरे घर की तैयारी, कितनी रौनक है तू क्या कर लेगा”।

“भैया जी! फूल नहीं तो पंखुड़ी तो कर ही लूंगा, बस आप थोड़ी मदद कर देते तो”

“चल भाग यहां से, बड़ा आया रथ बौड़ाने, बाहर करो इसे और अब दिखे नहीं यहां”

दरबानो ने उसे दरवाजे के बाहर कर दिया। मनोहर चुपचाप घर की ओर चल पड़ा मन में जवाब बनाते हुए की जमुना को क्या कहेगा। बड़ी उम्मीद थी कि उसे भैया जी कुछ मदद करेंगे। मनोहर घर आ गया बाड़े में पड़ी चारपाई पर बैठ गया।

“बात हुई भैया जी से”

"हां"

"फिर"

मनोहर ने जमुना की ओर देखा। जमुना मनोहर के चेहरे को देख सब समझ गई। तुम चिंता मत करो जैसी माता की इच्छा हमसे जैसा होगा वैसा करेंगे। जब मानता के उल्टे साथिये बनाए थे तो सीधे भी करेंगे ना। मनोहर को जमुना की बातों से कुछ तसल्ली हुई। गणगौर बैठे 7 दिन हो चुके थे। भैया जी के घर रोज भजन, गाने होते। रोज नई टोलिया भजन गाने आती। नए-नए पकवानों का भोग लगता। बाड़ी के दर्शन के लिए लोग आते खूब चढ़ावा चढ़ता।जमुना पड़ोस की दीदी के घर बाड़ी पूजने गई। उस दिन अमावस थी। घुघरी का भोग लगना था पर जमुना के पास सिर्फ थोड़ी सी धानी थी उसने उसी का भोग लगाया। गरीबों के देवी देवता भी गरीब होते हैं कम में ही प्रसन्न हो जाते हैं। आठवें दिन माता जी पाठ बैठने वाली थी पूरे गांव में उल्लास छाया था लोग भैया जी के घर भरी-बाड़ी का पूजन करने जा रहे थे। जमुना ने भी पड़ोस में दर्शन किए।

शाम को सभी ने उत्साह से झालरिया दिया। सभी झुंड बनाकर माता एवं धनियर राजा के आगे नाच रही थी। शाम को सभी पाट को सजाकर पानी पिलाने मंदिरों में ले जाया गया पर वहां भी पैसा आगे था। अमीरों के रथ पहले रखे गए और बाकी बाद में। जमुना जीजी के साथ बहुत पीछे खड़ी थी पर उत्साह में थी। कल उसे रथ बोड़ाना था। उसी की तैयारी उसके मन में चल रही थी। देखते-देखते नौवां दिन भी आ गया जब माताजी की विदा होनी थी। मान्यता के अनुसार होली पर पार्वती जी (रानू बाई) मायके आई है फिर गणगौर के बाद धनियर राजा (शिवजी)उन्हें लिवाने आते हैं, फिर मायके में उन्हें मनुहार कर एक दिन के लिए रोक लिया जाता है। उसी दिन रथ बौड़ाने वाले लोग माता के रथों को अपने घर आमंत्रित करते हैं। आज जमना भी तैयारी कर रही थी। मोहल्ले वालों ने भी मिलकर उनके साथ दिया। उसने सभी रथों को अपने घर बुलाया सबके पैर धुलाये, सबको पानी पिलाया सभी पाटों पर विराजे रनू बाई एवं धनियर राजा को भेट दी। रनु बाई की गोद में लापसी एवं ढाणी भरी। उधर भैया जी के घर भी रथ बौड़ाये जा रहे थे। बड़ा सा सामियाना लगाकर सारे जोड़ों और उनके परिवारों की पंगत हो रही थी। सबकी पैरावनी की गई। माता के जस गाए जा रहे थे।

बड़ा भंडारा चल रहा था। सारा गांव आमंत्रित था पर शायद गांव की यह बस्ती जो गरीब थी वह सारे गांव में नहीं आती थी। भैया जी के दरवाजे के अंदर तक आने की उन्हें अनुमति नहीं थी। जमुना की मन्नत तो पूरी हो गई थी। दिन भर की व्यवस्था के कारण वह बहुत थक गई। शाम को चक्कर खाकर गिर पडी। मनोहर घबरा गया।दौड़कर पड़ोस वाली जीजी को बुला लाया। जमुना को देख वह बाहर आकर बोली

"भैया, चलो साथिया सीधे कर लो तुम्हारी मानता मैया ने पूरी कर दी है।

❒❒❒

शून्य से साकार तक

प्रकृति में सृजन की अनोखी क्षमता है। मनुष्य, पेड़ पौधे, जीव जंतु सब प्रकृति की देन है। प्रकृति अनगिनत रहस्य से भरी हुई है। उसमें हो रहे परिवर्तनों को समझ पाना कठिन है। मनुष्य जन्म भी किसी रहस्य से कम नहीं है।अलग अलग धर्मो में मनुष्य जन्म की अनेक किवंदंतियों को प्रमुखता से आधार बनाया गया है। जैसे मनु सतरूपा, आदम हव्वा मनुष्य के जनक रहे। पर विज्ञान कुछ और ही कहता है। प्रकृति में अनेक परिवर्तनों के बाद जीवन शुरू हुआ। प्रत्येक जीवधारी एक कोशिका से ही विकसित हुआ और निरन्तर वृद्धि करते हुए अपने रूप में आया। द्रव्य से मनुष्य बनने की प्रक्रिया बड़ी ही रोचक है। वही आज आपके समक्ष मैं प्रस्तुत करता हूं। मैं एक बीज हूं जो अपनी जननी के गर्भ में ही बनता हूं। मैं हर महीने कई समूह में जिन्हें ओसाइट्स कहा जाता है मे तैयार रहता हूं। मैं छोटे अंडे जैसा द्रव से भरा सिस्ट जिन्हें फॉलिकल्स भी कहा जाता है के रूप में निषेचन के लिए तैयार रहता हूं।

यदि निषेचन नहीं हुआ तो प्रत्येक महीने में मासिक चक्र के दौरान अपने आसपास की दीवार के साथ चार–पांच दिनों तक रक्तस्राव के साथ बाहर निकल जाता हूं। फिर आठ नौ दिन बाद पुनः बनने लगता हूं यह प्रक्रिया हर महीने होती है तब तक जब तक की माहवारी चलती रहे, हां यदि निषेचन

हो जाए तो मेरी विकास यात्रा शुरू हो जाती है। आपको बताऊ कितना आश्चर्य एक छोटी सी सेल से पूरा मनुष्य बनने की प्रक्रिया में लगभग 9 महीने 9 दिन का समय लगता है। आज मुझे मुझे पता चला कि मेरी जन्मने की यात्रा शुरू हो गई है। गर्भावस्था के दौरान मुझ में कई बदलाव होंगे इस समय को यदि 3 महीना की समय अवधि में बांट दिया जाए तो यह विकास समझना आसान होगा। मैं बताता हूं कि इन तीन चरणों को ट्रिमेस्टर कहा जाता है। पहली तिमाही गर्भधारण से लेकर 12 सप्ताह तक चलेगी। इस दौरान मैं अपनी छोटी-छोटी कोशिकाओं से मिलकर भ्रूण बनूँगा। पहली तिमाही बहुत रोमांचक होती है।शुरुआती दिनों में मेरी मां बहुत थकान महसूस कर रही है। उन्हें कभी कभी उल्टी भी आती है। पहले तो सप्ताह में शरीर धीरे-धीरे हार्मोन जारी करता है दूसरे सप्ताह में अंडा युग्मनज में बदल जाता है। यह बंडल ब्लास्टोसेट कहलाता है। मैं अब पूर्णत: परिपक्व होने के लिए गर्भाशय की दीवार से चिपक गया हूं। धीरे-धीरे प्लेसेंटा बनने की शुरुआत हो रही है। मेरे चारों ओर एक जल रोधी थैली बन रही है यह एमनियोटिक थैली मुझे विकास के दौरान कुशनिग प्रदान करेगी।चौथे सप्ताह तक मैं सिर्फ खसखस के बीच के बराबर ही हूं।

इतने सब परिवर्तनों के बाद भी मेरी मां को शायद पता नहीं है कि वह गर्भवती है उन्हें कभी-कभी सुबह मतली आती है।माहवारी बढ़ने पर उन्होंने जांच कराई और पता चला कि वह गर्भवती है। वह बहुत खुश है और मैं भी। मैं दो महीने पांच सप्ताह का हो गया हूं। मेरी तांत्रिक ट्यूब, मस्तिष्क, रीड की हड्डी और केंद्रीय तंत्रिका तंत्र के ऊतक बनने लगे हैं। एक छोटी सी ह्रदय ट्यूब भी बन गई है जो सामान्य से तेज 110 प्रति मिनट धड़कती है। छठवें सप्ताह में हाथ पैर की छोटी-छोटी कलियां मुझ में से निकल रही है। रक्त कोशिकाएं बन रही है। जिसमें खून का बहाव शुरू हो जाएगा। कान, आंख, मुंह बन रहे हैं। मैं मानव बनने की राह पर चल पड़ा हूं। मां ने अल्ट्रासाउंड कराया ताकि मेरी वृद्धि को देख सके। सातवें सप्ताह में हड्डियां, जननांग बन गए हैं। अभी मेरा सर अन्य अंगों की तुलना में काफी बड़ा है। मैं अपने आकार के कारण कुछ कुछ समुद्री घोड़े से लग रहा हूं।आपको पता है इस अवस्था मे सभी गर्भस्थ शिशु एक से ही लगते है, चाहे वो मनुष्य हो या अन्य कोई जानवर। आठवे सप्ताह में सभी अंग बढ़ रहे हैं।

मेरे हाथ पैर बढ़ रहे हैं पर उनकी उंगलियां जाली जैसी झिल्ली से जुड़ी हुई है। मेरी आंखें भी बन गई है और गर्भनाल प्लेसेंटा से मुझे पूरी तरह से ऑक्सीजन मिल रही है।अब मैं 5 से 1 इंच तक लंबा हो गया हूं।शायद सेम के आकार का।अब तीसरा महीना शुरू हो गया है मेरे चेहरे के अंग हड्डियां मांसपेशियां बन रही है। नवे सप्ताह में मेरे दांत और स्वाद इंद्रिय भी बन गई है। अब मैं कुछ कुछ मनुष्य सा दिखने लगा हूं।मेरे हाथ पैर पूरी तरह बन चुके हैं। जालियां हट चुकी है नाखून बन गए हैं बाहरी अंग भी बनने लगे हैं। सप्ताह 11 में अब मैं अपनी मुट्ठी खोलने और बंद करने लगा हूं मेरी हड्डियां सख्त हो गई है घुटने टखने और कोहनिया बन गई है, पर अभी त्वचा दिखाई नहीं दे रही है। 12वीं सप्ताह तक सभी बाहरी अंग बन गए हैं अब आंतरिक अंग भी जैसे परिसंचरण पाचन तंत्र मल मूत्र प्रणाली का भी विकास हो रहा है। पहले तिमाही ही में महत्वपूर्ण अंगों के बनने की प्रक्रिया हो गई है। यह सबसे महत्वपूर्ण समय है इस समय माँ को बहुत हिदायत दे दी गई है, अच्छा खाने और आराम करने की सलाह भी दी गई है।अब मैं 2.5 से 3 इंच लंबा बेर के समान हो गया हूं।

अब मेरे विकास की दूसरी तिमाही शुरू हो गई है मैं गर्भ में मुड़ने और पलटने लगा हूं। कभी-कभी माँ किसी काम से हिल जाती है तो मैं भी पूरा हिल जाता हूं मुझे लगता है मां अब मेरी उपस्थिति महसूस करने लगी है उन्होंने एनोटॉमी स्कैन से देखा कि मेरी वृद्धि भी अच्छी है। एक बार मां के डॉक्टर ने उन्हें डॉपलर अल्ट्रासाउंड से मेरी धड़कन भी सुनवाई थी, मैं उसे समय नींद में था उन्होंने मुझे जगा दिया मुझे बहुत रोना आया मैंने देखा कि वह मुझे देखकर हंस रही है। उन्होंने कहा मेरा सर कितना बड़ा है। मैंने उनको समझाने की कोशिश की कि मैं समय के साथ-साथ सही रूप में आ जाऊंगा पर वह हँसती रही। 14 सप्ताह में मेरे शरीर की त्वचा मोटी होने लगी है और बारीक रोए भी उगने लगे हैं।कभी-कभी मुझे भूख लगती है तो मैं अपनी उंगलियां मुंह में रख लेता हूं। मेरे फेफड़े बढ़ रहे हैं और एमनियोटिक द्रव में मिली ऑक्सीजन से मैं सांस ले रहा हूं। अब मेरे कान इतने विकसित हो गए हैं कि मैं बाहर की आवाज सुन सकता हूं कभी-कभी तेज आवाज या प्रकाश से मैं चौंक जाता हूं और हलचल करने लगता हूं शायद मेरी मां इसे महसूस भी करती है वह कभी-कभी अपने

पेट पर हाथ फेर कर मुझे सहलाती है शांत करती है। 17वें सप्ताह में मेरी त्वचा भरने लगी है जो वरनिक्स नामक सफेद परत से ढकी है यह परत मुझे एमनियोटिक द्रव में रहने के बाद भी सुरक्षित रखती है। 19 सप्ताह में मेरे हाथ पांव के हिलाने को मेरी मां महसूस करती है। कभी-कभी वह मुझसे बात भी करती है मुझे बताती है कि मैं जल्दी ही उनसे मिलूंगा। मुझे अच्छा लगता है कि वो मेरा ध्यान रखती है। मेरा मस्तिष्क भी तैयार हो रहा है मुझे मां की बातें समझ आने लगी है। पहले के समय में कहा जाता था कि गर्भावस्था के दौरान जैसा सोचा जाता है या जिस वातावरण में रहते हैं उसका असर बच्चों पर होता है।अभिमन्यु भी चक्र के भेदन को मां के गर्भ में ही सीखे थे। मां के सारे क्रियाकलापों का असर शिशु पर पड़ता है। पांचवे महीने में मैं 9 से 10 इंच तक लंबा लगभग एक पाउंड का हो गया हूं। मां ने फिर सोनोग्राफी कराई है मैं डर रहा हूं डॉक्टर मुझ पर उपकरण चला रहे है। उन्होंने मां को दिखाया मेरी त्वचा का रंग लाल झुर्रीदार एवं पारदर्शी नसे दिख रही है। मैं पलके खोल सब देख रहा हूं और हाथ पर हिलाकर मां को बता रहा हूं कि मैं देखो कितना बड़ा हो गया हूं। अभी मेरे जन्म में समय है।

मेरी त्वचा के नीचे वसा भर रहा है फेफडे विकसित हो रहे हैं। छठवें महीने तक मेरा वजन 2 पाउंड हो गया है। सातवें महीने में दर्द, प्रकाश और आवाज के प्रति में ज्यादा संवेदनशील हो गया हूं। अब एमनियोटिक द्रव भी कम होने लगा है। मुझ में मेलेनिन बन रहा है जिससे मेरी त्वचा और आंखों का रंग बनेगा। तीसरी तिमाही गर्भावस्था का अंतिम चरण है। इस समय मेरा वजन बढ़ रहा है सबसे ज्यादा मेरे मस्तिष्क का विकास हो रहा है।मैं 17 से 18 इंच लंबा हो गया हूं नौवां महीना आ चुका है। मेरे सभी अंग विकसित हो चुके हैं। अब मैं कभी भी जन्म ले सकता हूं। शुरुआत से अब तक मैं पूरे गर्भ में घूमता था पर अब मैं सिर्फ सिर के बल नीचे की और आ गया हूं।माँ बहुत असहज महसूस कर रही है मुझे भी लग रहा है कि मैं कब बाहर निकलूं। मैं जन्म लेने के लिए तैयार हूं मैं धीरे-धीरे गर्भ में नीचे सरक रहा हूं। एक दिन मां को बहुत दर्द हुआ मुझे भी लग रहा है कि कब तक मैं ऐसे उलटे लटकाने की सजा मिलेगी मैं नीचे सरक आया। माँ डॉक्टर के पास गई है। जरूरी जांच करने के बाद कुछ देर में मैं बाहर आ गया हूं।

मुझे गर्भनाल से अलग कर दिया गया है। मैं बहुत रो रहा हूं मां ने मुझे अपने पास बुलाया, चुप कराया और गोद में मैं चुपचाप सो गया हूं यह थी मेरी कहानी मुझे इस दुनिया में आकर अच्छा लग रहा है।

❑❑❑

गीली लकड़ियां

शाम ढले मंदिर की घंटियां घर लौटती गायों की घंटियों के साथ मिलकर मधुर संगीत छेड़ रही थी। चौपायों के चलने से साथ-साथ धूल का गुबार भी उड़ रहा था। ऐसा लग रहा था जैसे एक साया का उनके साथ चल रहा हो। मनोहर सब जानवरों को घेरकर हांक लगा रहा था। कभी-कभी कोई पंक्ति छोड़ इधर उधर हो जाता तो वह दौड़ दौड़ कर उन्हें फिर उसी कतार में ला खड़ा करता। वह मुंह से अलग-अलग आवाजें निकाल कर उन्हें सही दिशा में चलने को आदेशित करता और वे सीधे बच्चे से एक के पीछे एक चलने लगती। जैसे ही गांव की सीमा शुरू हुई सब चौपाये अपने अपने घरों की ओर बढ़ने लगे। कैसा खेल है ना प्रकृति का, यह मूक जानवर सांझ ढले अपने आप अपने अपने घरों में पहुंच जाते हैं चाहे दिन में कहीं भी चर रहे हो। मनोहर पगडंडी के किनारे पान की गुमटी पर रुक गया। सिर पर बंधे गमछे को निकाल पसीना पोछा और कोने में रखे मटके से पानी पीने लगा।

" अरे मामा, कितने प्यासे हो, देखो आधा पानी नीचे गिरा दे रहे हो, जरा धीरे पियो, मटका कहीं भागा नहीं जा रहा।"

मनोहर ने देखा उसकी हड़ बड़ी मैं सच में आधा पानी नीचे गिर गया था और उसका कुर्ता भी गीला हो गया था। गिलास नीचे रखता हुआ मनोहर बोला

“ बहुत तप रहा है इस साल, शरीर का पानी सूख गया। दिनभर ढोरों के पीछे चलते चलते शरीर का सारा पानी सूख जाता है। गले में कांटे चुभने लगते है।

“ हां मामा, तप तो बहुत रहा है पता नहीं क्या होगा”।

“ला इक बीड़ी दे”

मनोहर बीड़ी सुलगाकर पास पड़ी बेंच पर बैठ गया। शाम ढल रही थी फिर भी लू के थपेड़े कम नहीं हुए थे। उसकी कनपटी से पसीना चू रहा था। बीड़ी का कस लेता हुआ वह उड़ती धूल के गुबार को देख रहा था।

“ मामा!कहां खोए हो आज, क्या हुआ गर्मी ज्यादा लग रही है”हाथ पर तम्बाकू मसलता हुआ दुकानदार बोला।

“ हां गर्मी तो है, पर मैं तो बिटवा की सोच रहा हूं। उसने दो कॉपी मंगवाई है। तुमको तो पता है मेरी हालत। इस गर्मी में खेत सूखे पड़े हैं, पानी के लिए तरस रहे हैं पैसा कहां से आए। बिटवा को होशियार होना अखर रहा है मुझे, आठवीं तक तो पढ़ लिया अब आगे पढ़ने को कहता है। सोचा था थोड़ा बहुत तो यही गांव में पढ़ लेता, फेल होता तो पढ़ाई बंद करवा देता पर वह तो अव्वल आ रहा है।आगे बढ़ता जा रहा है, मास्साब भी कहते हैं आगे पढ़ाओ, बाहर गांव भेजो। तुम बताओ, यहां तो खाने के लाले पड़े हैं उसे कैसे बाहर भेजूं। वह कहता है बाबा मैं पढ़ जाऊंगा तो तुम्हारा सारा कर्जा उतार दूंगा। बस मुझे पढ़ने दो। कहते-कहते बीड़ी भी खत्म हो गई थी मनोहर ने बीड़ी जमीन पर पांव से मसलते हुए कहा

“अच्छा भैया, राम-राम! समस्या है तो कभी कम नहीं होगी “कहकर वह घर की ओर चल पड़ा।

मनोहर कर्मठ किसान था। उसकी पुश्तैनी कुछ जमीन भी थी। पर कुछ सालों से कभी सूखा तो कभी अतिवृष्टि, कभी बाढ़ इन कारणों से फसल नहीं ले पाया।उसकी जमीन का कुछ हिस्सा डूब में भी चला गया। फिर पिताजी का इलाज, मां का ऑपरेशन, बहन की शादी और कुछ अपने परिवार के लिए कर्ज लेते लेते बहुत रकम सिर चढ़ गई थी। कुछ चुकता करता तो दूसरे खर्चे सामने आ जाते। महंगाई भी तो दिनों दिन बढ़ रही थी। वह अपना खेत तक गिरवी रख चुका था। उसी जमीन को बटाई पर लेकर जोतता, पर लागत नहीं निकलती। कर्जा का फंदा ऐसा ही है एक बार कसा

तो कसते ही जाता है। वह तो साहूकार भला आदमी है जो थोड़ी रियायत दे देता है। मनोहर ने घर पहुंचकर हौद में भरे पानी से हाथ पैर धोए और बाड़े में बंधी गाय को चारा पानी दिया। पूरा घर चूल्हे के धुए से धुंधा रहा था। वह खासते हुए रसोई में पहुंचा।

"तुझसे कितनी बार कहा है गिली लकड़ियां मत जलाया कर धुंआ करती है"

" तुम ला कर देते हो क्या, सूखी लकड़ी जंगल से काट कर लाई हूं यह, जो है उसी में पकेगा खाना" मनोहर बाहर दालान में आ गया कवेलू से धूंआ बाहर निकल रहा था जैसे वह भी घर से बाहर भाग जाना चाहता हो। कभी-कभी मनोहर के मन में उलटे सीधे ख्याल आते। कभी वह सोचता कि सब छोड़ भाग जाए। कभी सोचता मर जाऊं तो सब खत्म हो जाए पर बिट्टू और उसकी मां का चेहरा सामने आ जाता। मैं उनकी जरूरतें पूरी नहीं कर पा रहा।तभी बिट्टू दौड़ते हुए आया

"बाबा कॉपी लाए?"

मनोहर रुंआसा सा बिट्टू की तरफ देखने लगा। शायद बिट्टू समझ गया वह भी भीतर फैले धूंए में खो गया। बिट्टू की मां ने आवाज दी

"रोटी खा लो"

मनोहर ने जैसे-तैसे रोटी निगली और उस घुटन से बाहर आ गया। सुबह चिड़ियों की चहचहाट से नींद खुली। काम निपटा खेत की ओर चल पड़ा। इतनी गर्मी में खड़ी फसल भी झुलस रही थी। वह उसी पान के टपरे पर आ गया। सुबह से ही गर्मी अपने शबाब पर थी। टपरे में टाट की आड़ कर छांव की हुई थी।उसी टाट में रस्सी बांध कर गुटके और बच्चों के चिप्स और पॉपकार्न के पैकेट लटक रहै थे, जो हवा के थपेड़ों में फड़फड़ा रहे थे। बेंच पर बैठते हुए मनोहर बोला

-'ला एक बीड़ी दे"

"मामा तुम्हारा खाता भी बढ़ते जा रहा है"

"हा दे दूंगा, भाग थोड़ी रहा हूं मनोहर खीजते हुए बोला।

उसने बीड़ी सुलगा ली, बीड़ी के धुएं में उसे कवेलू से निकलते धुएं की याद आ रही थी। टपरे में रेडियो बज रहा था। जिसमें सरकारी योजनाओं के बारे में बताया जा रहा था। वह ध्यान से सुनने लगा। उसे उम्मीद की

किरण दिखाई देने लगी, वक्त सुधरता सा लगा। उसने आधी जली बीड़ी बुझाई और कान खोंस सरपंच के घर की ओर दौड़ पड़ा। रेडियो पर सुनी सब बातें सरपंच को बताई और योजनाओं के बारे में पूछा। उसका कुछ कर्जा माफ हो सकता है, बिट्टू को मेधावी छात्रवृत्ति मिल सकती है, उसे फसल खराब होने पर मुआवजा भी मिल सकता है। सरकारी योजनाओं के तहत फसल बीमा और राहत राशि भी मिलेगी।

वह बोला"सरपंच जी, इतनी सारी योजनाए चल रही है पर हमें क्यों नहीं मालूम पड़ता"।

"मनोहर आज सरकार ने किसानों के लिए बहुत सारी योजनाएं निकाली है लेकिन जानकारी के अभाव में उन्हें उसका लाभ नहीं मिल पाता और वह गलत कदम उठा लेते हैं या सारा जीवन परेशानी और कर्ज में निकाल देते हैं। तुम अपनी जमीन के कागज ले आओ और बिट्टू के स्कूल में मैं बात करता हूं बेटा होशियार है तो गांव का नाम रोशन करेगा। सरपंच जी की सहायता से मनोहर जैसे कई किसानों को योजनाओ का लाभ मिला।

आज बिट्टू जिले के सरकारी ऑफिस में अधिकारी के कुर्सी पर बैठा था सामने नेम प्लेट पर लिखा था 'विनय मनोहर लाल' मनोहर और बिट्टू की मां सरकारी क्वार्टर के बगीचे में बैठे चाय पी रहे थे चपरासी ने ठंड से बचने के लिए अंगीठी में लकड़ियां लगाई थी तभी मनोहर बाबू बोले

"क्यों बिहारी, तुमने फिर गीली लकड़ियां सुलग दी, देखो कितना धुआं कर रही है। ये गीली लकड़ियां ही उसके संघर्ष की साक्षी भी।

❑❑❑

गुल्लक

अचानक उसकी नींद खुली, वह पसीना पसीना हो गई थी। उसने सरकार को टटोला, वह गहरी नींद में था, उसने उठकर घड़े से पानी पिया और फिर सोने की कोशिश करने लगी। गर्मी के दिन थे, टीन की खोली तप रही थी। सरकार बार-बार करवट बदल रहा था, जिधर उसका शरीर जमीन से टिका होता वह भीग जाता पसीने से। फिर वह करवट बदल देता जिससे पसीने में हवा लगती तो थोड़ी ठंडक मिलती। खोली में चारों और टीन की चादर लगी थी। एक आदमी सो जाए बस इतनी सी जगह थी उसमें। छत भी टीन की, पर छत तो थी। कहीं से बिक रहे कबाड़ को मांगी ने बमुश्किल कबाड़ा था। जोड़-तोड़ कर छत बनी थी, जिसमें वह और उसका बेटा सरकार रहते थे। एक कोने में कुछ बर्तन और कुछ एक चूल्हा था। एक गोदड़ी और कुछ कपड़े, यही मांगी की गृहस्थी थी। हां एक बोरा भी था जो उसकी जीविका था। वह भी जगह-जगह से थेगड़ो से पटा था। वह रोज उसे कंधे पर लेकर कबाड़ ढूंढने निकलती थी। खोली के बाहर टूटी चप्पलों, कपड़ों की कतरनो, प्लास्टिक की बोतलों के ढेर पड़े थे। वह बीने हुए कबाड़ से कुछ बचा कर रख लेती थी क्योंकि वह मंगल कबाड़ी पूरे पैसे नहीं देता था। फिर वह बड़े सेठ के पास जाती बड़ा सेठ पैसे भी देता और...। उसे पता नहीं वह कब से यह काम कर रही है। शायद बचपन से, मां-बाप का पता नहीं, पर साथ रहने वाली काकी ने बताया था कि तेरे बाप ने तेरी मां

को पीट-पीटकर मार डाला। जब तू 7 बरस की थी। तेरे बापू को जेल हो गई और तू तब से मेरे पास है। मांगी उसकी माँ की अकेली सन्तान थी, छोटी थी तो कहीं से कुछ कुछ मांग लाती, तभी से वह मांगी हो गई थी।

मांगी अभी बस 19-20 साल की ही होगी और 2 बरस के उसका बेटा भी। पता नहीं किसका, कब आया पेट मे, जब पेट बढ़ा, तब समझ आया, फिर क्या सरकार आ गया उसके पास। एक बार उनके टपरों में कोई नेता आया था। लोग कह रहे थे सरकारी आदमी है बहुत वादे कर गया। तब से उसने भी बेटे का नाम सरकार रख दिया जिसके आने जाने का पता नहीं था।

वह सुबह जल्दी उठी। क्योंकि उसे आज ज्यादा पन्नी और कबाड़ बिनना था। साथ वाली बिन्नू रोज उससे जल्दी पहुंचकर ज्यादा बीन लेती थी और ज्यादा कमा लेती थी। आज वह जल्दी पहुंचेगी यह सोच वह जल्दी-जल्दी गोदड़ी लपेटने लगी। सरकार को भी सोते में उठाकर काकी को सौप आई। काकी ने उसे भी पाला था, उसके बेटे को भी देखती थी। उसने हाथ से ही अपने बेतरतीब बालों को पीछे कर जुड़ा बांधा और सलवार ऊपर खोंस ली। रात की दो रोटियां कागज में लपेट कर दुपट्टे में बांधकर दुपट्टे को कमर में खोस लिया। बाहर पड़ी चप्पलों में से 1 जोड़ी पांव में फसाई और बोरे को कंधे पर उठा कचरे वाले ग्राउंड की ओर चल दी। ग्राउंड में जगह-जगह कचरे के ढेर लगे थे, कहीं कहीं जलाये हुए कचरे के ढेर से धुआं निकल रहा था। मवेशी भी कचरा बीनने वालो के साथ अपने काम मे मगन थे। प्लास्टिक, कांच, कपड़े सब अलग अलग किए जा रहे थे।बिन्नो पहले ही वहां मौजूद थी। उसे देख मांगी के मुंह से बस गाली ही निकली

“साली पता नहीं सोती है कि नहीं, ना जाने कब आ गई।

“तू कब आई इधर, रात को ही आ गई थी क्या”।

विन्नू बोली- “अब्बी तो आई”। दोनों बात करते-करते कचरे में से चीजें ढूंढने लगी। अचानक दोनों के हाथ एक टूटी हुई प्लास्टिक की गुल्लक पड़ गई। दोनों एक साथ उस पर टूट पड़ी। एक दूसरे से छुड़ाने लगी। दोनों उसे लेना चाहती थी। इस चक्कर में उनकी हाथापाई हो गई। दोनों एक दूसरे के बाल पकड़कर नोचने लगी। जैसे तैसे साथ वालों ने उनको अलग किया। इसका फायदा उठाकर बिन्नो गुल्लक लेकर भाग गई। मांगी वहीं से चिल्लाई

“रुक, कमीनी मैं आती हूं”

और मुंह बिचका कर ऐसे थूका जैसे बिन्नो कोई ही थूक रही हो। उसने अपने भूरे बिखरे बालों को फिर समेट कर पीछे कस लिया। कपड़े ठीक कर फिर कचरा खंगालने लगी। धीरे-धीरे सूरज माथे पर चढ़ता जा रहा था। उसने ग्राउंड के बाहर लगे नल से पानी पिया और जुड़े में घुसे पाउच को हाथ में उलट लिया। पान मसाले को कुछ देर हाथ पर उंगली से मसला और दांत और होठों के बीच कोने में दबा लिया। वह जल्दी जल्दी हाथ चलाने लगी। उसके दिमाग में वह गुल्लक ही घूम रही थी।वह उसे पा कर रहेगी।

" काका कितना टेम हो गया"

उसके साथ वाले आदमी से कहा। साथ वाले ने भी जेब से छोटी डिबिया जैसा फोन निकाला देख कर कहा

"आज इत्ती जल्दी काम हो गया, बोरा तो भर ले। सेट फिर पैसा काटेगा"।

"साले सेठ की तो ...."मांगी गुस्से में बोली और पान मसाले की पिक एक तरफ थूक दी।

"तुम टेम बताओ"।

"3:00 बजा है अभी"।

"हओ "मांगी ने आधा बोरा भरा और ग्राउंड के बड़े से गेट के बाहर आ गई।

गेट मैन रोड पर खुलता था और थोड़ी दूर एक चाय की गुमटी थी। यहां मांगी का खाता चलता था। धूप बहुत तेज थी, मांगी ने दुपट्टा कमर से खोल सिर पर ओढ़ लिया। गुमठी पर पहुंच मांगी ने बोरा एक तरफ पटका और वहां लगी बेंच पर बैठ गई। गुमठी में पीपे की दीवारो के बीच स्टोव पर चाय उबल रही थी। इलायची की सुगंध फैल रही थी। कलुआ करछी से चाय के भगोने में चाय हिला हिला कर उबाल रहा था।पास ही पार्ले जी बिस्कुट का आधा खुला पैकेट रखा था। कुछ पाउच पान मसाले के भी लटके थे।

"कलुआ एक कट "

चाय बनाने में मग्न कलुआ मांगी को देखकर कुटिलता से मुस्कुराया। मांगी सलवार को घुटनों तक चढ़ा एक पाव बेंच पर रख बैठी थी उसका एक पाव बेंच के नीचे था जिससे वह बार-बार हिला रही थी। उसने जुड़े

में फंसा पाउच निकाला और हथेली में रगड़ने लगी।

"मेरी रानी, चाय पिएगी की पाउच खाएगी"।

"तुझे क्या, मैं कुछ भी करूं" वह गुस्से में बोली।

"मेरी रानी, क्या हुआ बहुत गुस्से में है कहे तो ठंडा बनाऊं"

कलुआ उसी कुटिलता से मुस्कुरा रहा था, मांगी की खुली टांगो को घूर रहा था।

"कलुआ तू अपना काम देख, मेरा माथा मत खा, ला चाय दे "और वह कमर में बंधी रोटी चाय के साथ खाने लगी। चाय की गुमटी के ऊपर बड़ी सी हार्डिंग में उन्हीं नेताजी की तस्वीर थी। वह हाथ जोड़े खड़े थे। हार्डिंग में जगह-जगह छेद कर दिए गए थे ताकि हवा आरपार हो सके। फिर भी लू के थपेड़ों से वह हिल जाती थी, इसमें नेताजी भी उड़ते से दिखते।

मांगी कुछ देर में कबाड़ी मंगलू के कबाड़खाने में बैठी थी। उसने बोरे का सामान उसके सामने फैला रखा था। कबाड़खाने के आदमी सामान अलग-अलग कर रहे थे। कबाड़खाना बड़े एरिया में फैला था। जगह जगह कबाड़ के ढेर लगे थे। सामने बड़ा से तराजू टँगा था जिस पर एक और बड़ा सा बाट रखा था, उस पर भारी सामान तोला जाता था। सेठ के पास इलेक्ट्रॉनिक कांटा भी था जिस पर वह कई बार खड़ी हो जाती और वजन देखती। पर वह बढ़ता ही नहीं था। हां जब सरकार उसके पेट में था तब बढ़ा था उसका वजन, तब से अब तक उत्ता का उत्ता ही। सेठ कबाड़ की एक कुर्सी पर बैठा था। मोटी थूल थूल तोंद लिए सड़े हुए दांतो में फंसी सुपारी को उंगली से खोद रहा था। उसके माथे पर तेल के साथ पसीना भी रहा था। मांगी भी पसीने से लथपथ हो रही थी, उसने कुर्ते की बांह से ही अपना माथा पोंछा। उसने देखा दरवाजे से बिन्नू भी उसी समय आई। उसने भी कुछ दूरी पर अपना बोरा पलट दिया। अचानक गुल्लक भी बोरे से गिरी और मांगी की निगाह उस पर टिक गई। बिन्नू ने भी उसे देख लिया। उसने गुल्लक उठाकर अपने पास रख ली। सेठ सब हरकतें देख रहा था। मांगी जो सेठ के पास बैठी थी बोली

"सेठ वो गुल्लक मेरे को चईये"

"क्यों"

"बस चईये"

"तो इसका पइसा देना पड़ेगा"।

"हहो तो ले लेना ना"

सेठ ने बिन्नो का हिसाब किया और बोला

"बिन्नो यह गुल्लक कहां से मिल गई "

"वही कबाड़े में" बिन्नू बोली।

"ला दे दे, यह 10 रख ले"।

बिन्नो ने गुल्लक सेठ को दे दी। सेठ गुल्लक लेकर मुस्कुरा रहा था। मांगी की निगाहें गुल्लक पर टिकी थी। बिन्नो के जाते ही सेठ ने सिगरेट जलाई। धुंआ मांगी के मुंह पर छोड़ते हुए बोला

"मांगी क्या देगी गुल्लक का रेट"।

"क्या लोगे तुम"

"तुझे तो पता है ना मेरे को क्या चाहिए"।

"मेरे को सब पता है तू साला सुधरेगा नहीं" और सेठ के मुंह से सिगरेट लेकर मांगी ने अपने मुंह में रख ली। सेठ कबाड़खाने के कोने में बने कमरे में चला गया। मांगी गुल्लक हाथ में ले वहीं सिगरेट फूंकती खड़ी रही। उसने सिगरेट जमीन पर फेंक दी और चप्पल से ऐसे मसली जैसे अपना स्वाभिमान मसल रही हो सेठ के कमरे में कुछ लडकियों के पोस्टर लगे थे कोने में एलुमिनियम के टेबल पर रेडियो बज रहा था जो कभी कबाड का हिस्सा था सेठ ने उसकी आवाज तेज कर दी।

"सेठ गुल्लक की कीमत कुछ जादा नहीं लगा ली तुमने"

"अरे मांगी, कीमत तो तेरी है गुल्लक तो ऐसे ही ले जा" कमरे में रेडियो की आवाज गूंज रही थी कुछ देर बाद वह सेठ के पीछे पीछे कमरे से निकली अपना कुर्ता और दुपट्टा ठीक करते हुए। उसके कबाड़े का हिसाब कर फिर से सेठ ने सिगरेट सुलगा ली। मांगी बोरा समेट टपरे में आ गई।

शाम हो चली थी वह गुल्लक को हाथ में लिए खुशी-खुशी घर जा रही थी सेठ के दिए हिसाब के पैसों से उसने डबल रोटी और दूध खरीदा यही उनका शाम का भोजन था टपरे के बाहर सरकार बिखरे कबाड़ से खेल रहा था उसके बाल रूखे से उसके माथे पर लटक रहे थे वह पूरा धूल में लिपटा हुआ था गर्मी में पसीने के कारण पूरा शरीर चिपचिपा रहा था मांगी ने बोरा टीन में खोसा और सरकार को गोद में उठा लिया कभी कभी उसके अंदर की

मां जाग जाती तो उसे वह बहुत दुलार थी सोचती कहा मुझ कबाड़न के घर आ गया क्या करेगा बड़ा होकर कबाड़ी बनेगा या पढ़ेगा यह सोच वह डर जाती कभी वह सोचती न जाने किस का बीज आ गया उसमें मंगलू का बड़े सेठ का कलुआ का या.... उसे भी याद नहीं उसके मां-बाप ने तो उसे दर दर का कर दिया पर वह बेटे को पढाएगी इसलिए तो उसने गुल्लक लाई है उसमें पैसा जोड़ेगी उसने गुल्लक पटरे पर रख दी सरकार को गोद में लेकर पेंट की खाली बाल्टी में भरे पानी से उसके हाथ पैर धुलाए

"कितनी बार तुजे कहा है धूल में मत खेल मानता नहीं"

मांगी बडबडा रही थी उसने बेटे टपरे में बैठाकर एक डबलरोटी पकड़ा दी सरकार उसे कुतरने लगा वह मैली सी टीशर्ट और चड्डी पहने था जो मांगी ने तीन-चार दिन से बदली नहीं थी वही एक जोड़ी कपड़े तो उसके पास थे जो थोड़े साबुत थे बाकी तो छेदों से पटे पड़े थे मांगी ने भी अपने कपड़े उठाए और बाहर कोने में फटी चादर से बनी मोरी में नहाने लगी उसे एकाएक मंगल कबाड़ी की याद आ गई वह पत्थर से हाथ पैर रगड़ने लगी जैसे मंगल का स्पर्श मिटा देना चाहती हो नहाने का पानी मोरी पड़े पत्थर के आसपास जमा हो रहा था मांगी के शरीर से भी काला सा पानी निकल कर रहा था वह टपरे में आ गई चूल्हे में लकड़ी सुलगा दूध चढ़ा दिया वह पटरे पर रखे गुल्लक को देख रही थी

"इसको पाने के लिए बहुत मेहनत करनी पड़ी" उसे भरने के बारे में वह सोचती हूंई गर्म दूध में डबल रोटी मसलकर खाने लगी।

मांगी पढ़ी लिखी नहीं थी पर हिसाब कर लेती थी उसने उंगलियों पर जोड़ा की गुल्लक भरने के लिए रोज थोड़े थोड़े पैसे बचाने होंगे वह रोज सुबह जल्दी उठाती वह गली मोहल्लो से भी कबाड़ जमा करने लगी कभी-कभी कुछ खाने को दे देता तो खा लेती नहीं तो वही बासी रोटी से दिन निकालती कई बार दिन में वह कचरे में से पन्नी प्लास्टिक को अलग कर ढेर लगा लेती फिर शाम के इकट्ठा कर बेच देती उसने जमा पैसो को खरचनेकी की योजनाएं भी बनाई थी

गर्मी अपने पूरे शबाब पर थी वह बहुत थक गई उसने पानी पिया और कलुआ की चाय की दुकान पर आ गई दोपहर का समय था ग्राहक भी कम थे चाय के भगौने पर मक्खियाँ भिनभिना रही थी मांगी के माथे से

पसीना बह कर कनपटी तक आ रहा था जिससे एक लकीर बन गई थी मांगी सांवले रंग की थी पर धूप और धूल के कारण काली सी हो गई थी उसने कलुआ के ठेले पर पर रखी केन से लोटे में नोट को भरा और मुंह धोया और कुर्ते के निचले हिस्से से पोंछ लिया।

"अरे वाह मेरी मांगी तेरा रूप तो बड़ा निखार आया। कचरे में क्रीम कि डिब्बी मिल गई क्या"

"चुप कर कलुआ, ला एक कट दे दे, आज बहुत थक गई ऐसे तो काम नहीं होगा"

"क्यों कर रही इतना काम, कौन खाएगा तेरा"

"है ना मेरा सरकार, उसके कपड़े लेना है पढ़ाना है बहुत काम है पैसे का, इसके लिए काम तो करना ही पड़ेगा ना"

हां है तो सही, मुझसे ले ले कुछ उधार"

"तू देगा" मांगी ने कलुआ की और देखा वह फिर मांगी की फटी सलवार से दिख रही टांगों को देख रहा था

मांगी ने बोरा फिर कंधे पर टांगा और चल डी कलुआ कहते रह गया मांगी की गुल्लक धीरे-धीरे भर रही थी उसको मकसद मिल गया था औरत अपने आप को बांधने का कोई बहाना ढूंढ लेती है और उसे पता नहीं होता कि वह बंधन में है स्वच्छंद। मांगी भी बंध गई थी गुल्लक और पैसों के बीच उसका सपना पूरा होने को था पर तकदीर तो उससे आगे चलती थी वह खुश कैसे हो पाती एक दिन शाम को घर लौटी तो सरकार उल्टियां कर रहा था पीली हरी उल्टी देख वह घबरा गई काकी से पूछा तो बोली "मांगी तेरा छोरा अब नहीं संभलता, दौड़ता है दिनभर, कुछ खा लिया होगा, मैं कब तक देखूं, नहीं बनता अब" काकी भी ठीक ही कह रही थी वह बूढ़ी हो गई थी मांगी ने गुल्लक के पैसे दुपट्टे में बांधे और सरकार को लेकर अस्पताल दौड़ी अस्पताल के स्टाफ ने पहले तो उसकी हालत देखकर अंदर ही नहीं आने दिया फिर बच्चे की स्थिति देख बरामदे में लिटा दिया

"क्या हुआ इसको"

"पता नहीं, शाम से ही उल्टी कर रहा है"

"कुछ खा लिया क्या"

"पता नहीं"

"बोतल लगेगी"

"लगाओ ना जल्दी" मांगी अधीर हो रही थी सरकार की हालत बिगड़ रही थी

ले आ"

"कित्ते की आएगी" मांगी दुपट्टे में बंधे मुड़े तुड़े नोट और कुछ सिक्के उसके सामने फैला दिए

"और लगेंगे इतने ही"

"तुम लगाओ तो मैं लेकर आती"

मांगी अस्पताल मंगलू के पास भागी उसे उसी से मदद की उम्मीद थी

"मेरे को 200रू. होना"

"क्यों" मंगलू तराजू के पास बैठा लोहा तोल रहा था उसने मांगी को देख फिर पूछा

"200 रु.क्यों होना"

"मेरा छोरा अस्पताल में भर्ती है उसको बोतल लगी है पैसा कम पड़ गया है तुम दे दो अभी फिर कबाड़ में कटवा दूंगी" मंगल ने मांगी को देखा वह पसीने से लथपथ खड़ी थी बाल नारियल की बूच से एक दुसरे में उलझे से, मैल और पसीने से चिकट हुई कमीज सलवार पर जूट की रस्सी जैसे दुपट्टा था जो उसके सीने पर सांप सा लोट रहा था मांगी सेठ को आशा भरी निगाहों से देख रही थी

"मांगी मैं तुझे दे देता हूं पैसे पर तुझे पता है ना मेरे को क्या चाहिए" और मंगल अपने होंठों पर जीभ फिराने लगा मांगी अपने सूखे पपड़ीदार होठों को फैलाकर बनावटी मुस्कुराहट से सेठ को देख बोली

"बड़ा कमिना है तू"

"हां वह तो हूं, कबाड़ की कीमत देता हूं जो फालतू समझ फेंक देते हैं उसका भी पैसा वसूल लेता हूं" और वह उठकर उस कमरे में चला गया कमरे में रेडियो बज रहा था जैसे ही मांगी कमरे में आई सेठ ने दरवाजा बंद कर दिया और मांगी की बांह पकड़ खाट पर बैठा लिया मांगी ने देखा कमरे की सभी तस्वीरों में उसे अपना चेहरा दिख रहा था जो पैसों के लिए अपने शरीर की गुल्लक को खर्च कर रही थी उसकी आंखों की कोरों से दो पानी की बूंदे ढलक गई वह सेठ के पीछे कपड़े ठीक करती कमरे से निकली और 200रू. लेकर अस्पताल की ओर चल दी।

❑❑❑

वह पहाड़ी

उस पहाड़ी होटल के किनारे कार खड़ी कर मैं उन बादलों के झुरमुट को देखने लगा जो ऋषिकेश से मेरा पीछा कर रहे थे। मैं था तो पहाड़ी ही इन बादलों की लुका छिपी कि मुझे आदत थी, पर थोड़ा सुस्ताने यहां रुक गया था। होटल में भीड़ कम थी शायद किसी ने अपने घर के हॉल को ही कैफे का रूप दे दिया था। यह पहाड़ी लोग अपनी जीविका के लिए घरों को होटल या होमस्टे बनाकर रोजी चलाते हैं। यहां लोगों का जीवन टूरिस्ट के जरिए ही चलता है। मैंने होटल के कोने में पड़ी टेबल पर बैठते हुए पास खड़े लड़के को इशारा किया। नया ग्राहक देख वह लड़का मुझे ही देख रहा था। जल्दी से आकर हाथ के गंदे कपड़े से टेबल साफ करने लगा। मैं देख रहा था उस लड़के के हाथ टेबल पर जल्दी-जल्दी चल रहे थे। कुछ सेकंड में ही उसने टेबल साफ कर दी और खड़ा हो गया। वह मेरे चेहरे को देखने लगा शायद वह चाहता था कि मैं कुछ आर्डर करूं मैंने कहा "एक चाय "वह फिर खड़ा रहा मैंने उसकी ओर देखा, शायद वह कुछ और सुनना चाह रहा था। "एक बिस्कुट का पैकेट" मैंने कहा, और वह चला गया। शायद उसे सिखाया ही जाता था कि ज्यादा से ज्यादा ऑर्डर लाये, फिर इनकी कुछ ऊपरी कमाई भी हो जाती टिप से। बाहर हल्की-हल्की फुआरे पड़ रही थी। होटल के बगल में भुट्टे वाला भुट्टे सेक रहा था। उसकी खुशबू वहां बैठे मुझे लुभाने लगी। मैंने उस छोटे लड़के को फिर इशारा किया। वह फिर उस

गंदे कपड़े से टेबल पोंछने लगा। टेबल पोंछ फिर खड़ा हो गया शायद वह उसे सिखाया गया था या उसकी आदत में ही था। “दो भुट्टे ले आओ”, मैंने 100 का नोट उसकी और बढ़ते हुए कहा वह कुछ देर नोट हाथ में लेकर देखता रहा, फिर दुकान से बाहर चला गया। दुकान के बाहर तीन चार साल का बच्चा रुमाल और मोजे बेच रहा था। उसने दोनों हाथ में छोटी-छोटी पनिया लटका रखी थी। दुकान के बाहरी दरवाजे के पास खड़ा होकर वह अंदर बैठे लोगों को देख रहा था। आते-जाते लोगों को मोजे और रुमाल खरीदने के लिए आग्रह भी कर लेता फिर वही आकर खड़ा हो जाता। दुकान मालिक ने सड़क की धूल और गंदगी से बचने के लिए मुख्य दरवाजे पर बड़ी पारदर्शी पॉलिथीन लटका कर रखी थी। वह लड़का उसी के किनारे खड़े होकर अंदर झांक रहा था। मुझे उसकी जगह मैं दिखा। इतना ही छोटा या कुछ एक साल बड़ा होगा। ऐसे ही की- चेन और मोजे, रुमाल लेकर मैं भी होटल के आगे खड़ा रहता। पांच भाई बहनों में मैं मंझला था। मां बड़ी बहन के साथ मुझे रोज सुबह से सड़क पर भेज देती। कभी रात की बासी रोटी खाकर या कभी ऐसे ही। हम दोनों भाई-बहन सड़क की होटल में चक्कर लगाते रहते। कभी-कभी होटल मालिक भगा देता या कोई गंदी सी गाली देता, तो मैं भी उसे वही लौटा देता। वह दौड़कर बाहर निकलता और हम भाग जाते। फिर दूसरी होटल के सामने जाकर खड़े हो जाते। मुझे टूरिस्ट को देखना बहुत अच्छा लगता। साफ सुथरे लोग, अच्छे कपड़े पहने, बड़ी-बड़ी गाड़ियों से उतरते, कभी-कभी गोरी चमड़ी वाले भी आते। मैं उन्हें बस देखता रहता। माँ से कहता मुझे भी साफ रखा करो, अच्छे कपड़े पहनाया करो, वह कहती हम साफ दिखेंगे अच्छे कपड़े पहनेगे तो हमसे सामान कौन लेगा, कौन दया करेगा। माँ हम दोनों को पहले भेज कर दोपहर में दो छोटे भाई बहनों को ले आती वैसे ही गंदे फटे कपड़ों में। ऐसा नहीं था कि हमारे पास अच्छे कपड़े नहीं थे पर यह गंदे कपड़े हमारे काम पर जाने के थे। कभी-कभी कुछ लोग हमें कपड़े खाना वगैरा दे जाते माँ उन कपड़ों को संभाल कर रख देती। हमे फटे कपड़े ही पहनाती। पहाड़ की तलहटी के छोटे से गांव में हमारा घर था।पहाड़ो को काटकर चीड़ और बांस के सहारे टीन बांधकर टपरे जैसा घर बना था हमारा, जो बस छांव देता था। पिताजी एक चाय की दुकान में काम करते थे। वह हम दोनों को

सुबह से सड़क पर छोड़ जाते। हम दोनों कभी किसी होटल के सामने तो कभी सड़क के किनारे खड़े आने जाने वाले लोगों को कभी मोजे, कभी रुमाल तो कभी पॉपकॉर्न बेचते। कभी-कभी कोई ज्यादा दयावान मिल जाता तो वह ज्यादा पैसे दे देता है या खाना खिला देता। एक्स्ट्रा के पैसे हमेशा दीदी मुझसे छीन लेती। कभी-कभी वह मुझे पास के मंदिर भी ले जाती। उसने मां की नजर बचाकर तार का ओम नमः शिवाय लिखा हुआ साचा बनवाया था। वह मंदिर का सिंदूर उठाकर पानी में घोल लेती और मेरे साथ मंदिर के किनारे खड़े होकर आने जाने वालों को सांचे से तिलक लगाती। मैं उसके साथ थाली पकड़कर खड़ा रहता। लोग एक दो रुपए के सिक्के हमारी थाली में डाल देते। दीदी कहती मां को मत बताना नहीं तो भगवान गुस्सा हो जाएंगे। मैं भगवान की मूर्ति को देखकर डर जाता। उनकी आंखों में मुझे गुस्सा दिखाता। बड़ी-बड़ी आंखें घूरती सी दिखती। मैंने दीदी से पूछा भी था कि ये काम करने के लिये किसने कहा, वो बोली भगवान ने कहा है। मैंने आज तक दीदी के इस राज को नहीं बताया था। पता नहीं दीदी रुपए क्यों जोड़ रही थी। कभी-कभी जब हम शाम को घर पहुंचते, मां और दीदी की खूब लड़ाई होती। बाबा तो पीकर पड़े रहते। दीदी खूब रोती। मैं चुपचाप उन्हें देखते-देखते सो जाता।

एक दिन हम सब जब सड़क पर आए दीदी एक-दो घंटे मेरे साथ रही फिर कुछ देर बाद मोटरसाइकिल पर एक लड़का आया। दीदी ने मुझे प्यार किया और उस लड़के ने एक बड़ी चॉकलेट दी।दीदी उसके पीछे बैठ कर चली गई। मैं शाम तक अकेला वही भटकते रहा।अंधेरा होने तक दीदी नहीं आई। मां हमें लेने आई फिर हम दोनों ने दीदी को आसपास खोजा। पर वह नहीं मिली, उसके बाद आज तक मैं उनसे नहीं मिला।उस दिन माँ रात में बहुत रोई, शायद बाबा ने उनको मारा था।मां ने कुछ दिन मुझे सड़क पर नहीं भेजा मैं अकेला जो रह गया था, फिर कुछ दिनों बाद छोटे भाई के साथ भेजने लगी। अब मैं समझदार हो गया था। लोगों को समझने लगा था। मुझे मोजे और रुमाल बेचने में शर्म आने लगी थी। मैं अब सड़क पर जाने से मना करता।माँ मुझे बहुत मारती है मैं घर के पिछवाड़े छिप जाता। मुझे पढ़ने का शौक था। दीदी कुछ पढ़ी थी। फिर बाबा की शराब के चलते उसका पढ़ना छुड़ा दिया था। दीदी ने मुझे थोड़ा सा पढ़ना सिखाया था। बाबा मुझे

अब उनके साथ चाय के वाले की दुकान पर ले जाते। पहाड़ों पर बर्फ बहुत गिरती, बारिश भी बहुत होती। ठंड के कारण लोग चाय बहुत पीते। मैंने बाबा से कहा कि हम अलग से दुकान करते हैं। मेरी जिद पर हमने गांव के पास के चौराहे पर एक टपरी रख ली और चाय बेचने लगे। कुछ दिनों में दुकान चलने लगी। मैं विदेशी टूरिस्ट से अंग्रेजी में बात करता वह बहुत प्रभावित होते, कभी कभी ज्यादा पैसा भी दे जाते। मैं साथ–साथ पढ़ता भी रहा। टपरी से बड़ी गुमठी, फिर गुमटी से होटल तक का सफर तय करते मैं बड़ा हो रहा था, और मां बाबा बूढ़े। छोटा भाई बहन भी बड़े हो गए थे। मैं उनको भी पढ़ा रहा था। एक होटल से कई होटलों का सफर तय करते हुए मैं आज इस मुकाम पर पहुंच गया। इन पहाड़ों ने मुझे मजबूत से खड़े रहना सिखाया था। यह सिखाया था कि कितनी भी विषम परिस्थितियां आए हमें डरना नहीं है, परिस्थितियां हमसे टकराकर वापस लौट जाएगी। जैसे पहाड़ होते हैं, ऊंचाई की तरफ देखते हुए मुझे भी बस ऊंचाई तक पहुंचाने की सनक थी और मैं पहुंच भी रहा था। इन्हीं ख्यालों में पता नहीं कितना समय निकल गया। सामने रखी चाय और भुट्टा दोनों ठंडे हो गए। मैंने काउंटर पर बिल दिया और होटल के बाहर आ गया। बाहर वही बच्चा खड़ा था "सर प्लीज मोजे ले लो, सर प्लीज!"उसकी आंखों में मुझे मेरा अतीत दिख रहा था। मैंने जल्दी से उसे कुछ पैसे पकड़ाए और अपने वर्तमान के साथ कार में बैठकर भविष्य की ओर चल पड़ा।

❑❑❑

सड़क

फट, फट, फट की आवाज के साथ डामर पिघला रही मशीन से जुड़ा जनरेटर बंद हो गया। सुबह का उजाला अपनी रोशनी कम कर अंधेरे की ओर बढ़ गया। सारे मजदूर अपने-अपने तगाड़ी फावड़े समेटे अपने तंबुओं की ओर बढ़ने लगे। सबको मजदूरी मिल चुकी थी। किसी ने परचून की दुकान से आज रात और कल सुबह की जरूरत का सामान खरीदा, तो किसी ने पान तंबाकू तो कोई कलाली की ओर बढ़ गया। शहर की सीमा से लगे गांव को जोड़ने के लिए पक्की सड़क बनाई जा रही थी। काम की शुरुआत सड़क की धूल झाड़ने से हुई। सानी और उसकी साथ की औरतें छोटी-छोटी फूल झाड़ू लिए दिन भर सड़क की धूल झाड़ती। सर पर गमछा बांधे शरीर पर साड़ी और उस पर आदमी वाला शर्ट पहने सानी शाम तक तो पहचान ही नहीं आती। दिन भर की धूल उसके चेहरे और कपड़ों पर जम जाती यहां तक की उसके पलके भी धूल से भर जाती। सुबह की जवान सानी शाम ढले बूढ़ी सी लगती। गर्मी के दिन आ गए थे। सारा वातावरण आग उगल रहा था। दूर तक देखो तो सड़क चमचमाती सी लगती। धूल साफ करने का काम खत्म हो चुका था। अब सानी और बाकी औरतें सड़क पर पतली डामर की तह फैला रहे थे। पैरों में बड़े-बड़े जूते पहने एक ट्रक जैसी मशीन के पीछे वह चलते। वह मशीन गीला डामर सड़क पर फैलता और बाकी उसके पीछे-पीछे झाड़ू से सड़क पर उस डामर को फैला देते। गर्मी

और गर्म डामर के कारण सबकी हालत खराब हो जाती। सभी ऊपर से नीचे तक डामर में सने रहते। शाम हुई, काम खत्म हुआ। मशीन बंद हो गई। गर्मी के दिन भी देरी से ढलते। सुबह जल्दी हो जाती। सानी भी परचून की दुकान पहुंची कुछ जरूरत का सामान लिया और सड़क किनारे बनाएं तंबू की ओर चल दी और उसका पति कलाली की तरफ। उसने चूल्हा जलाया और गर्म पानी चढ़ा दिया। मुन्ना सो रहा था वह दोपहर में ही उसे दूध पिलाकर गई थी वह कभी–कभी उसे अफीम चटा देती जिसके नशे में वहां सोया रहता उसके साथ की सारी औरतें भी यही करती क्योंकि सेठ काम पर बच्चों को नहीं लाने देता कहता – "तुम लोगों का ध्यान काम से ज्यादा बच्चों पर रहता है किसी को भूख लगी तो किसी को कुछ सारा समय तुम लोग बच्चों में लगी रहती हो।" जब से सेठ ने मना किया तब से सानी कभी–कभी ही मुन्ना को ले जाती कभी–कभी दूध पिलाने के बहाने आ जाती है मुन्ना बस 6 महीने का तो है अभी उसने सेठ से बात कर रखी है कि वह कभी–कभी लाएगी मुन्ना को काम पर। सड़क किनारे ही सुला रखेगी ज्यादा ध्यान नहीं देगी। सेठ ने भी उसे ऊपर से नीचे तक देखकर इजाजत दी। सेठ को सानी में शिकार दिख रहा था और सानी को अपने बच्चों की परवाह। सानी ने गर्म पानी से हाथ पैर धोए और मुन्ना को उठाया मुन्ना अफीम के नशे में ही था कुनमुना कर फिर सो गया। सानी ने परचून की दुकान से लाई थैलिया खोली और खत्म हो चुके समान को डिब्बो में भर दिया। उसके पास बस एक दिन चल जाए इतना सामान होता। दो आलू चूल्हे में पटक कर वह आटा मलने लगी। गर्मी में दिनभर तपने के बाद चूल्हे की आग में उसका चेहरा लाल होकर तमतमा रहा था। उसने आटे की लोई को हाथों से चौड़ा कर तवे पर डाल दिया। मनोहर दारू पीकर आ चुका था। लटटू की रोशनी में पसीने से उसका चेहरा लाल दिख रहा था। वह चूल्हे के पास आकर बैठ गया।"आ गया पीकर " , "हां", " रोज क्यों पीता है रोज की मजदूरी पीने में उड़ा देता है"। "हां तो तेरे को क्या, अपनी मेहनत की पीता हूं"। "और जरूरत का सामान, मुन्ना की देखभाल और मैं" "तुम्हारा तुम जानो, कमाओ और खाओ, मुझे नहीं पता"। "फिर ब्याह कर क्यों लाया, बच्चा क्यों पैदा किया"। "तेरे बाप ने लालच दिया था कि रोज की मजबूरी से जो पैसा देगा, साला खुद तो मर गया, तुझे मेरे माथे कर गया और यह बच्चा

भी तो तूने पैदा किया"। मनोहर दारू के नशे में बड़बड़ा रहा था। उसने आलू के भरते में रोटियां खाई और कोने में बिछाई चटाई पर सो गया। सानी चूल्हे के पास ही बैठी रही। दिन भर की थकान के बाद शरीर इतना टूटा की खाने का भी मन नहीं होता। जैसेतैसे उसने सूखी रोटियां निगली और मुन्ना के बगल में लेट गई। कुछ ही देर में उसे अपने शरीर पर कुछ रेंगता सा महसूस हुआ। मनोहर ने उसे अपनी और खींचा और नशे में उसे कचोतता रहा। वह लाश सी पड़ी रही है। मन भर जाने के बाद मनोहर तो एक तरफ सो गया पर सानी करवट अदबुझ चूल्हे को देखते रही। उसमें कुछ और अंगारे अभी सुलग रहे थे वह एकदम हवा लगने से धधकने लगता और फिर धीमी पड़ जाते सभी। राख हुए कोयलों के बीच बार-बार अपनी तपन बचाने में लगे थे। सानी उनका संघर्ष देख अपना जीवन याद कर रही थी। वह पैदा तो इन्हीं तंबू में हुई उसके मां-बाप भी इन्ही सड़क बनाने वाले मजदूरों में से थे जहां की सड़क बनती, उनका काफिला फिर चल पड़ता। कोई स्थाई घर नहीं, गृहस्थी नहीं, रोज डिब्बे भरते सुबह खाली हो जाते। उसकी तरह उसकी मां भी खुद की मजदूरी से घर चलती। बाबा रोज दारू पीकर आते। मां बाबा रोज लड़ते वह सन्दूक की आड़ में छिप जाती। बाबा माँ को मारते, मां चिल्लाती। लगभग सभी झोपड़ी में यही होता। वह बड़ी हो रही थी समझने लगी थी। रात होते ही तंबू लाल लट्टू की रोशनी से पारदर्शी हो जाता। सब परछाइयां दिखने लगती। जो दिन की उजाले में ना दिखता वह रात का अंधेरा दिखा देता। किसी तंबू मे सिसकने की तो किसी से कराहने और किसी से दूसरी आवाज आती है। सारा घटनाक्रम कुछ देर चलता फिर सब और शांति छा जाती है।। दिन भर की थकान निकाल सब फिर सुबह के काम के लिए तैयार हो जाते। रात की सारी बातें भूल फिर सुबह हंसते हुए हुए साथ निकलते।। ना उनमें अमीरों जैसे जोड़ने की आदत थी ना भविष्य की चिंता वे बीते कल की सोचते ना आने वाले कल की। बस आज में जीते। इसलिए तो इतने संघर्ष, इतनी मेहनत के बाद भी खुश रह पाते है। सानी भी माँ के साथ काम पर जाने लगी।कौमार्य की दहलीज पर खड़ी सानी धूल भरी भी सुंदर लगती। मां उसे बढ़ती देख घबराती।। बाबा तो नशे में ही घर आता सुबह फिर निकल जाता। मां ने एक दो बार कहा भी उसे कि बेटी बड़ी हो रही है" वह बोला "तो क्या" नशे में उसने सानी

को देखा बाबा की नशे में धुत लाल आंखों में उसे चूल्हे के अंगारे जलते दिख रहे थे। माँ जैसे तैसे उसे दुनिया की नजरों से बचा रही थी। एक दिन मां बाबा की किसी बात पर लड़ाई हुई और बाबा ने मां को धक्का दे दिया मां चूल्हे पर गिर पड़ी मां जलने लगी साथ ही तंबू भी। आग की लपटे बढ़ने लगी तो आसपास के लोगों ने जैसे-जैसे आग बुझाई। उसने देखा बाबा की आंखों मैं लाल अंगारे बढ़ते जा रहे हैं। माँ जल गई थी बाबा फिर कलाली में जा बैठा। रात सानी पड़ोस वाली मौसी के पास सोई। रात भर मौसी की आंह, भरी सिसकी सुनती रही। सुबह मनोहर ने आकर उसे जगाया। "चल सानी तेरा ब्याह है'। वह आवक सी मनोहर का चेहरा देख रही थी। यह मनोहर ठेकेदार का खास आदमी था बहुत दिनों से उसे तक रहा था।" चल तेरे बाप ने तेरा सौदा कर दिया है अब मैं तेरे से शादी करूंगा" तभी मौसी बोल पड़ी" क्यों रे मनोहर! पहली बीवी के मरे चार दिन नहीं हुई कि दूसरे के पीछे पड़ गया" "मौसी शेर बूढ़ा नहीं होता और औरत तो पैदा ही आदमी के लिए होती है। एक मरी तो क्या दूसरी तैयार है। यह भी मरी तो तीसरी। कमी है क्या औरतों की। मौसी चुप हो गई, यहां तो हर दूसरी औरत की यही नियति थी। सानी उस अधेड़ मनोहर की ब्याहता बन नए आशियाने में आ गई।। मनोहर की पहली पत्नी की कुछ यादें वहां शेष थी बाकी तो मनोहर ने कलाली के हवाले कर दी थी। यहां के पुरुषों की यही मान्यता थी कि वह हर चीज को बिकाऊ समझते थे चाहे वह उनकी पत्नी ही क्यों ना हो। मनोहर कभी-कभी दूसरे मर्दों को भी सानी के पास भेज देता पैसों की खातिर वह किसी भी हद तक जा सकता था। सानी ने बहुत विरोध किया फिर अपना भाग्य समझ स्वीकार कर लिया। मना करती तो मनोहर उसे पिटता, इतना कि वह बेदम हो जाती। फिर सुबह से सड़क के काम सेठ की बातें। ।उसमें ताकत ही नहीं बचती। वह मुन्ना के कारण जीना चाहती थी इसलिए जो हो रहा था उसे सहन कर आगे बढ़ रही थी। सड़क के किनारे जिंदगी पल रही थी। तभी मुन्ना जाग गया। उसने मुन्ने को दूध पिलाया और उसे आँचल में भरकर सो गई। सुबह फिर रात के बचे राशन से खाना बना पोटली में बांधा और काम पर पहुंच गई। आज वह मुन्ने को काम पर ले आई थी। सड़क के किनारे ही एक बड़े पेड़ की टहनी पर झूला बनाकर मुन्ने को उसमें सुला दिया। साथ की औरतों के बच्चे

उसके आसपास खेलने लगे। सेठ ने देख लिया था कि सानी आज बच्चें को लाई है। मौका देख वह उसके पास पहुंच गया। सानी पैरो में बड़े बड़े जूते पहन बड़े दांतो वाले फावड़े से डामर मिली गिट्टी को फैला रही थी। "अरी सानी चल थोड़ी देर बैठ जा थक गई होगी –वह बोला। सानी काम में लगी रही। यह तो रोज की बात थी सेठ रोज ही उसे फंदे में फंसाने की कोशिश करता।जब सानी ने ध्यान नहीं दिया तो सेठ ने पैंतरा बदला, "सानी आज फिर बच्चे को ले आई, तुझे मना किया था न", अब सानी की बारी सुनने की थी। वह काम छोड़ सड़क किनारे आ गई। "सेठ मुन्ना आज बहुत रो रहा था, इसलिये ले आई। तुमको तो सब पता है कोई सम्भालने वाला नहीं है"। "तभी तो कहता हूं रानी, छोड़ उसको मेरे पास आ जा, रानी बन जाएगी, इन सबसे तू काम करवाएगी"। सानी सेठ का सारा मतलब समझ रही थी।सेठ ने धीरे से उसका हाथ पकड़ा और सड़क किनारे बने टीन के टपरे में ले गया। सानी जाते हुए साथ वाली निशा की और देखती गई, निशा भी समझ गई सब। सानी का फावड़ा उठा वह गिट्टी फैलाने लगी। बीच बीच मे बच्चे को भी देख आती। कुछ देर बाद सानी फिर उसी सड़क पर मिट्टी फैलानी लगी।

❒❒❒

फैसला

अदालत का फैसला उसके पक्ष में आया। लोगों के आंदोलन, भीड़ के जोश और चौराहों पर जलाई गई मोमबत्तियां ने उसे इंसाफ दिला दिया। वह पिछले एक महीने से अस्पताल में भर्ती है। जिंदगी और मौत के बीच खेल खेलते हुए जिंदगी जीत रही थी, वह धीरे-धीरे ठीक हो रही है। शरीर के घाव भर रहे हैं। 8 से 10 वहशियों ने उसके शरीर को जानवरों की तरह नोचा था।तन के घाव तो डॉक्टर इलाज से काफी ठीक हो चुके हैं पर मन के.... मन के तो रोज नए बनते जा रहे हैं। लोग रोज नए घाव बना जाते। लगभग डेढ़ महीने बाद उसे अस्पताल से छुट्टी दे दी गई। घर पहुंचते ही उसे कमरे में बंद कर दिया गया। उसे अपने ही घर में अपराधी महसूस कराया जाने लगा। कभी-कभी वह बहुत रोती उसके साथ जो हुआ उसमें उसकी क्या गलती थी।

एक दिन उसका पूरा परिवार अपने ही घर में मृत पाया गया। पुलिस जांच में मरने का कारण आत्महत्या बताया गया। घर की जांच में पिता और पुत्री का सुसाइड नोट मिला, फिर पुलिस केस बना... फिर सुनवाई हुई। आज अदालत में इस केस की अंतिम सुनवाई है। पहले पिता का सुसाइड लेटर पढ़ा गया

"मैं वह अभागा पिता हूं जो इस दुनिया की वहशी निगाहों से अपनी बेटी को नहीं बचा पाया। मैं अपने परिवार को समाज के तानों से नहीं बचा

पाया। मैं जहां जाता, या तो मुझसे सहानुभूति की जाती या लोगों की निगाहें एक ही प्रश्न करती 'आपकी लड़की....' मैं लोगों को जवाब दे देकर थक गया हूं। रोज सुबह लगता है कि कब रात हो और लोगों के सवाल सो जाएं। मेरी बेटी की निगाहें मुझे बार-बार कचोटती, ' कि मैं ही क्यों'... जब दोषियों को सजा हुई तब मुझे लगा कि मेरी बेटी को भी जीवन दान मिल गया पर उसके बाद की जिंदगी और भयानक हो गई। मेरी मौत का जिम्मेदार मैं खुद हूं क्योंकि मैं अपनी जिम्मेदारी नहीं निभा का पाया।"

पढ़ते-पढ़ते वकील का भी गला रुंध गया।

अब बारी उसके लेटर की थी "मम्मी पापा आत्महत्या कर चुके हैं मैंने उन्हें अभी देखा वह अपने कमरे में मरे हुए पड़े है। पापा का लिखा लेटर भी मैंने पढ़ा।

मैं तो घर मे ही थी, पढ़ाई कर रही थी। मम्मी पड़ोस में गई थी। पापा दुकान गए थे। वो लोग अचानक घर मे घुसे। मुझे मेरे ही कमरे में बंद कर मेरे साथ दुराचार किया। मैं न छोटे कपड़ो में थी, न अकेली बाहर घूम रही थी।मेरी गलती बस इतनी थी कि मैंने उस लड़के का प्रपोजल नहीं माना। जिसका बदला उस लड़के ने मेरी सबसे कीमती चीज लूट कर लिया। मेरी चीख सुन सब इकट्ठा हो गए। अर्धबेहोशी की हालत में मुझे अस्पताल में भर्ती किया। पापा मम्मी सब चुप खड़े थे। पापा पुलिस में रिपोर्ट करने के लिये सबको मनाते रहे, पर लोग धीरे धीरे चले गए। कोई साथ देने के लिये तैयार नहीं हुआ। सबने पापा को भी रोका, कहा - बदनामी होगी, लड़की की जिंदगी खराब हो जाएगी। पर पापा नहीं माने। उन्होंने रिपोर्ट लिखवाई। पर मेरे साथ जो हुआ उसमें मेरी या मेरे परिवार की क्या गलती थी। मुझे बार-बार मानसिक रूप से सजा दी जा रही है।बार-बार सवाल पूछे जाते हैं मैं इन दो महीनो में जिस दर्द से गुजरी हूं यह मैं ही समझ सकती हूं। लोगों ने मेरे लिए आंदोलन किया, मोमबत्ती जलाई, चक्का जाम किया, मुझे इंसाफ दिलाया, मैं सभी की शुक्रगुजार हूं। पर उसके बाद... अब मैं जहां जाती हूं लोग मुझे अजीब निगाहों से देखते हैं मैं किसी के लिए विक्टिम हूं किसी के लिए कोई नई कहानी। लोग बार-बार मुझे उस घटना को पूछते हैं जिससे मैं भूलना चाहती हूं। मेरे मम्मी पापा भी सबके सवालों का जवाब दे देकर थक गए हैं। पापा की दुकान से लोगो ने सामान लेना बंद कर दिया।

रिश्तेदारों ने हमसे व्यवहार बंद कर दिया। हम कैसे जिएंगे यही हमारा प्रश्न है मैं आपसे यही कहना चाहती हूं कि मैं आत्महत्या नहीं कर रही इस समाज में मेरे स्वाभिमान को मारा है। क्या मुझे समाज मे मिलाया जाएगा। क्या मैं सामान्य जिंदगी जी पाऊंगी। क्या मेरे मम्मी पापा मुझे फिर मिल पाएंगे।"

न्याय का घर सन्नाटे में था क्योंकि वह भी इस समाज का हिस्सा था।

❐❐❐

स्टेपनी

उस बड़े से हाल में कुशन वाले सोफे की कतार लगी थी। सौरभ कोने वाले सोफे पर जाकर बैठ गया। बैग से बोतल निकाल कर पानी पिया। गर्मी के कारण गले में कांटे चूभने लगे थे। हाल में ए.सी की ठंडी हवा फैली थी। वह थोड़ा रिलैक्स हुआ तो उसने चारों ओर देखा। लोग अपने-अपने काम में लगे थे। कोई इधर से उधर फाइल लेकर दौड़ रहा था तो कोई लैपटॉप में सर गड़ाए काम कर रहा था। मेडिकल रिप्रेजेंटेटिव के लिये इंटरव्यू हो रहे थे। सौरभ भी यहां इंटरव्यू देने आया था। रिसेप्शन पर बैठी रिसेप्शनिस्ट बार-बार उसे देख रही थी। दो-तीन बार तो उसने इग्नोर किया फिर बगल के टेबल पर पड़ी मैगजीन के पन्ने पलटने लगा। कुछ देर में चपरासी हाथ में चाय की ट्रे लेकर सामने खड़ा था। लग रहा था जैसे उसका यहां बैठना सबके लिए जिज्ञासा का विषय था। चपरासी ने उसे ऊपर से नीचे तक देखा और अपने तंबाकू से भरे मुंह को पिचका कर खड़ा हो गया। सौरभ ने अपने धूल से सने जूते को सोफा से सटा लिया और चपरासी की ओर देखने लगा। वह कभी सौरभ के बेतरतीब बालों को, तो कभी कोहनी तक मुड़ी आस्तीन तो कभी धूल से सने जूते को देख रहा था। थोड़ी देर में मुंह में भरा थूक निगलते हुए बोला

"चाय.... "

सौरभ ने चपरासी की ओर देखा वह बराबर पीछे रिसेप्शन की ओर देख

रहा था। कोई इशारा और समझ फिर बोला

"आपको वह मैडम बुला रही है, क्या आप इंटरव्यू के लिए आए हैं ?

"हां"सौरभ बोला।

ट्रे में दो डिस्पोजल कप रखे हुए थे। सौरभ ने एक उठा लिया। कंपनी के लोगो वाले कप में चाय और कड़वी लग रही थी। कप को डस्टबिन में डाल सौरभ ने अपने बाल वहीं लगे कांच में देख ठीक किये और पीछे पेंट से रगड़कर जूते पोंछ लिए और रिसेप्शन पर जाकर खड़ा हो गया।रिसेप्शनिस्ट फोन पर बात कर रही थी। सौरभ उसे देखने लगा। डेस्क पर तीन-चार फोन रखे थे कभी कोई फोन बजता तो कभी कोई। सौरभ ने सोचा, अभी तक तो मुझ पर नजर गड़ाए बैठी थी अब इतनी बिजी, जैसे ही उसने फोन रखा, सौरभ की ओर देखते हुए बोली-

"यस सर कहिए, "

" मैडम आपने बुलाया"

"अच्छा, ओके आप वहां बैठे थे ना"

"जी "

"क्या आप इंटरव्यू के लिए आए हैं"

"जी"

"आपने एंट्री करवा दी"

" नहीं"

" तो करवाइए ना"

" जी"

वह सौरभ की और देखने लगी। सौरभ अभी भी चुप खड़ा था। वह फिर बोली "योर एंट्री सर "

"जी! क्या बताना है"

अब वह खीज गई।

"आपका नाम, एड्रेस, और किस पोस्ट के लिए आप आए हैं"

"अच्छा, मैं सौरभ गुप्ता, यही भोपाल में रहता हूं। यहां मेडिकल रिप्रेजेंटेटिव की पोस्ट के लिए इंटरव्यू निकला था ना उसी के लिए आया हूं"

"ओके, आप बैठीए, मैं ऊपर इन्फॉर्म कर देती हूं फिर बुलाती हूं आपको"

"जी"

कहकर सौरभ फिर वहीं सोफे पर आकर बैठ गया। वह सोच रहा था कि आज का दिन यहीं निकल जाए तो नहीं तो उसे फिर इतनी गर्मी में तपना पड़ेगा और किस्मत पता नहीं क्या चाह रही थी।वह टेबल पर पड़ी मैगजीन पलटने लगा। सारी मैगजीन कम्पनी के एड से भरी थी।बस सब जगह दिखावा।

तभी चपरासी आकर बोला

"आपका इंटरव्यू कल होगा। आज की गिनती पूरी हो गई पहले नाम लिखवा देते तो हो जाता ना अब तक, अब कल आते से एंट्री करवा देना "

और हंसता हुआ दूसरे चपरासी के साथ सौरभ की ओर इशारा करता हुआ बात करने लगा। सौरभ ने जैसे ही सुना एक गहरी सांस छोड़ते हुए कंधे पर बैग टांगकर हॉल के बड़े से कांच के गेट के पास तक आ गया। शाम के 5:00 बज रहे थे पूरी डामर की सड़क जलती हुई दिख रही थी। उसने बोतल निकालकर पानी पिया और गेट से बाहर आ गया। कुछ देर वहीं सड़क किनारे आती जाती गाड़ियों को देख लिफ्ट के लिए खड़ा रहा, फिर फुटपाथ पर धीरे-धीरे चलने लगा। एक दो ऑटो वालों ने उसकी तरफ देखा भी पर शायद समझ गए कि यह सवारी नहीं बनेगी। उसने फुटपाथ पर इड्ली बेच रहे आदमी से इडली खरीदी और वही बेंच पर बैठकर खाने लगा। इडली वाला भी वहीं बैठा कोई गाना गुनगुना रहा था। सौरभ उसे देखने लगा।

कितनी सरल है ना उनकी जिंदगी ना दिखावे की चिंता, ना बैंक बैलेंस, ना गाड़ी, ना बंगला, ना दुकान। खुद के धंधे के खुद ही मालिक। किसी की जी हजूरी नहीं। हम मिडिल क्लास लोगों की जिंदगी तो दिखावे में ही निकल जाती है। और वह भी इसी मिडिल क्लास सोसाइटी के दिखावे में फंसा था और उसके मम्मी पापा भी सारी उम्र यही करते रहे। सौरभ बचपन से पढ़ने में बहुत सामान्य था, पर पिता ने सोसायटी में दिखाने के लिए शहर के बहुत बड़े स्कूल में दाखिल करवा दिया। जैसे तैसे धक्का लगाते हुए वह पास होता। माता-पिता को स्कूल में बुलाया जाता। सौरभ के खराब रिजल्ट के बारे में बात की जाती, सौरभ सिर नीचे झुका कर बात सुनता रहता। घर जाकर पापा सारा गुस्सा मम्मी और सौरभ पर निकालते। मम्मी फिर सौरभ को खूब पढ़ाती। वह चाहती थी कि वह सोसायटी के दूसरे बच्चों की तरह

खेल, तेराकी, बातचीत सभी में आगे रहे पर सौरभ जो याद करता वह भूल जाता। वह बहुत अंतर्मुखी लड़का था इसलिए दूसरे बच्चों में मिल नहीं पता। उसे दूसरे बच्चों से मिलने उनके साथ खेलने में डर लगता। जिससे वह कुछ सीख नहीं पा रहा था। उसकी इस आदत के कारण उसके पापा उसे बहुत डांटते। जिससे सौरभ और सहम जाता। सौरभ के दो छोटे भाई भी थे वह दोनों पढ़ने में, खेल में उससे आगे रहते। जिसके लिए भी सौरभ को ही ताने सुनने पड़ते। वह कोशिश तो करता पर मम्मी पापा के अनुसार कर नहीं पता। दोनों छोटे भाई हमेशा आगे बढ़ जाते। वह जैसे तैसे पास हो पाता था उसे ऐसा लगता है बस उस पर चीज थोपी जा रही है। सौरभ बस चुप सब करता रहता। उससे जुड़ी सारी बातें उसका खाना, कपड़े, उसकी पसंद ना पसंद सब फिक्स कर दी गई थी। बस वह स्टेपनी था जिसे कहीं भी फिट कर दिया जाता।कोई भी कपड़े किसी भी तरह का खाना कैसी भी पढ़ाई, उसकी पसंद की कोई जगह नहीं थी बस वह पढ़ रहा था क्योंकि मम्मी पापा चाहते थे। दसवीं के बाद भी उसे विज्ञान विषय दिलाया। वह बस उनका स्टेटस सिंबल था।

पापा अपने साथ के लोगों से बड़े गर्व से कहते –

"मेरे तो तीनों बच्चे शहर के नामी स्कूलों में पढ़ रहे हैं, बड़ा बेटा तो डॉक्टर बनेगा और छोटे को तो हम आर्किटेक्ट बनाएंगे।

पर पापा यह नहीं जानते थे कि हम क्या करना चाहते हैं। सौरभ बस पास होता गया।12वीं हो गया पापा ने डोनेशन देकर प्राइवेट कॉलेज में एडमिशन करा दिया। पर सौरभ पढ़ ही नहीं पा रहा था। वह फेल होने लगा पापा फिर गुस्सा होने लगे। अबकी बार मम्मी ने पापा को समझाया बस वही सौरभ को समझती थी। दोनों छोटे भाई भी पापा के साथ स्टेटस मेंटेन करने में लगे रहते। पापा उनसे बहुत खुश रहते। वह बस निरीह सा पापा के प्यार को तरसता। मम्मी के कहने पर उसे प्राइवेट कॉलेज में फिर से दाखिला मिला। विज्ञान विषय होने के कारण उसने बीएससी कर लिया। यहां भी जैसे-तैसे पास हो गया। उम्र के साथ-साथ सौरभ सिर्फ अपने में सिमटता जा रहा था। उसका उपयोग केवल फैमिली फोटो में रहता बाकी घर में कोई उससे बात नहीं करता।

छोटे भाई इंजीनियर और आर्किटेक्ट बन गए थे। पापा उनसे बहुत खुश

रहते हैं दोनों ने इस सोसाइटी में फ्लैट भी ले लिए। उनकी शादी के लिए खबरें आने लगी पर सौरव बड़ा था। सोसाइटी में सभी उसके बारे में जानते थे।उससे कोई बात भी नहीं करता। वह कोई नौकरी नहीं करता था। पढ़ाई के बाद कितनी ही जगह उसने नौकरी के लिए कोशिश की उसके खराब अकादमीक रिकॉर्ड के कारण कुछ बात नहीं बनी। पापा ने दोनों छोटे भाइयों की शादी कर दी। दोनों अपने-अपने परिवार के साथ अपने-अपने फ्लैट में शिफ्ट हो गए। अब बस सौरभ और पापा मम्मी रह गए। पापा अब भी सौरभ को कोसते। छोटे भाइयों का उदाहरण देते। छोटे भाई अपने में व्यस्त रहते। उन्हें मम्मी पापा की कोई सुध नहीं थी। ऐसे ही सौरभ पर ताने कसते पापा स्वर्गवासी हो गए।

सौरभ के पास सिर्फ मम्मी बची। मम्मी ही थी जो सौरभ को समझती। बाकी तो सौरभ सबके लिए बस स्टेपनी था। बस एक स्पेयर पार्ट जो कभी-कभी काम पड़ता। उपयोग हो जाता तो ठीक नहीं तो फालतू पड़ा रहता यू ही। पापा के जाने के बाद दोनों भाई अपनी-अपनी मेंगृहस्थी लग गए। मां की जिम्मेदारी सौरभ पर थी। वह नौकरी की तलाश कब से कर रहा था पर अब जरूरी हो गया था। वह मां के लिए स्टेपनी नहीं जरूरी अंग था जो उसके साथ जिंदगी बिताना चाहता था।

आज सुबह घर से भूखा ही निकल आया था और यहां भी निराशा ही हाथ लगी थी। अपने अंतर्मुखी स्वभाव के कारण वह आगे होकर किसी से बात करने में भी डरता। उसने बगल ही में रखे डस्टबिन में इडली की प्लेट फेकी दी। उसे डस्टबिन को देखकर उसके जैसे ही अपनी जिंदगी लगी जैसे डस्टबिन हाथ पसारे खड़ा है सारा कचरा समेटने के लिए, वैसे वह भी यूजलेस है दुनिया के लिए। जब जिसको लगा तब उपयोग कर लिया नहीं तो कोने में पटक दिया।

उसने ऊपर देखा। धीरे धीरे सूरज भी आसमान में छिपने लगा था, वह घर की ओर चल दिया कल फिर से यहां आने के लिए...

❐❐❐

गुलमोहर

गुलमोहर जेठ की तपती दोपहर और गर्मी से पूरा इलाका झुलस रहा था। सारे जीव जंतु ठंडक की तलाश में इधर-उधर छिप रहे थे। पर वह इस विपरीत परिस्थिति में भी फल-फूल रहा है अपने ऊपर परिंदों को शरण दे रहा है वह हरे पत्तों के बीच अपने लाल लाल फूलों के साथ सूरज की तपिश को भी चुनौती दे रहा है वह गुलमोहर है जो इस गर्मी में लहरा रहा है। उसके आंगन में बहुत सारे पेड़ पौधे हैं जिन्हें वह जतन कर सम्हालती है पर यह गुलमोहर बड़ा ढीट है उसे कोई फर्क नहीं पड़ता गर्मी से। देखो कितना फल फूल रहा है। पूरा पेड़ लाल लाल फूलों से लदा है।कितने ही पक्षियों ने उस पर घरौंदा बनाया था। दिन भर उसका आंगन चहचहाटो से गूंजता रहता है। शाम के 5:00 बज रहे थे। ढलती दोपहर ज्यादा गर्माहट उगल रही थी। बाहर बहुत गरम माहौल था फिर भी वह चाय का कप लिए बरामदे में आ गई। बरामदे में भी कई छोटे-छोटे गमलों में उसने पौधे लगा रखे थे जिन्हें टटोलना महसूस करना उनकी बढ़त देखना उसे पसंद था। उसकी शाम की चाय उन्हीं के साथ होती।

"मैडम कुछ पत्रकार आए हैं"

"हां, मैं आती हूं"

उसने जल्दी चाय खत्म की और अपने को आईने में सवारा।कनपटी

पर छाई उम्र को कानों के पीछे दबाकर आंखों में ढेर सारा काजल लगाया और अपनी कॉटन की साड़ी को कंधे पर से ठीक कर हाल में आ गई। जब से उसका उपन्यास गुलमोहर बाजार में आया था तब से साहित्य जगत में धूम मची थी। सबका अभिवादन कर बैठक में लगे सोफे पर बैठ गई। गजब का आत्मविश्वास था उसमें। सारे पत्रकार हरकत में आ गए और सवालों को संभाले सतर्क हो गए।

"मैडम! आपके नॉवेल गुलमोहर की बहुत चर्चा हो रही है, हाथो हाथ उसकी कॉपियां बिक रही है क्या बात है ?ऐसा क्या लिखा है? इसमें क्या कहानी है? किसकी कहानी है? बताएं "...

लगातार सवालों की झड़ी लग गई। वह लगातार सबको देख रही थी। कहां से शुरू करें क्या कहे इस असमंजस में फंसी थी। औरत की बेड़ियां अदृश्य होती है उसे खुद ही नहीं पता होता कि वह किस बन्धन में फंसी है। बस बंधे रहने का सुख कह लो या लगाव, वह बंधी रहना चाहती है। चश्मे की फ्रेम को ठीक करते हुए वह बोली –

"यह एक औरत की कहानी है, उसका पूरा जीवन है, उसका समाज के प्रति संघर्ष है।"

शाम घिर आई थी। लू के थपेड़ों से गिरे फूलों से पूरा आंगन अटा पड़ा है। वह सामने की खिड़की से लगातार उसको देख रही थी।जो एकमात्र उसके संघर्ष का साक्षी है। पत्रकारों की भीड़ से एक लड़की की ओर इशारा कर उसने अपने पास बुलाया।

"बेटा आपका क्या नाम है"

" श्यामली"

" अरे वाह! बहुत अच्छा नाम है"

" पर आपके माता पिता ने आपका नाम क्यों रखा कुछ सोचा आपने, क्या आपके सांवले रंग के कारण"

वह लड़की चुप थी क्या जवाब देती शायद रंग का दंश उसने भी सहा था।

" हां तो अब आप सभी को क्या बताऊं यह कहानी एक सांवली लड़की की है, जिसका खामियाजा वह ता उम्र भुगतती रही। कभी–कभी इंसान की एक कमी उसे इतना बेबस, इतना कमजोर कर देती है कि वह

हार जाता है। इंसान को तो ईश्वर ने बनाया है और फिर हर व्यक्ति गोरा क्यों होना चाहता है।यह कहानी भी एक सावली लड़की की है जिसे उसके रंग का अंधकार सहना पड़ा।वह काजल है। कुछ और सवालों के बाद पत्रकार चले गये। वह बालकनी में आ गई सूरज भी अपने घर जाने की तैयारी में था। उसके नावेल की किरदार वह खुद ही थी।

उसने उसके पिता का रंग पाया पर दोष मां को मिला।माँ की कोख में थी तो पिता के कोख में लात मारने के बाद भी नहीं मरी। अपनी बड़ी बड़ी आंखें खोल दुनिया में आ गई। कई बार उसने अपनी दादी को कहते सुना" कहां से आ गई कोयले की खदान हमारे घर, मेरा हीरा बेटा, कोयले से काला हो रहा है। मां कभी उसे उबटन लगाती कभी कोई महंगी क्रीम लगाती।कहती गोरी हो जा नहीं तो मेरे जैसे काली किस्मत पर रोयेगी। मां को देख कभी कभी लगता की मां कितना दबा कर बैठी है मन में। पर वह नहीं सहेगी सब। कभी-कभी इंसान उन गलतियों की सजा भोग रहा होता है जो उसने कभी नहीं की होती।उसकी भावनाएं इतनी सस्ती हो जाती है कि हर कोई उसे मुफ्त में लेना लेने लगता है और रिश्तो की डोर संभालते संभालते उसमें खुद ही उलझ जाता है।

काजल के बाद उसकी एक बहन और आई। वह काजल से रंग में कुछ अच्छी थी। तो वह दादी और घर में सब की प्यारी हो गई उसने घर से ही सहन करना सीख लिया था। घर में सबसे छोटी तो सभी प्यार करते।कोई आता तो छोटी को पैसे देकर जाता।वह भी उन्ही माता पिता की औलाद थी पर काजल भी नाम के अनुरूप थी जैसे सोना आग में तैयार होता है वैसे वह भी चमक पर आ रही थी। उसका दाखिला पास ही करा दिया गया। वह और छोटी दोनों साथ स्कूल जाते पर उसे छोटी के सहायक के रूप में माना जाता। स्कूल के हर कार्यक्रम में वह बढ़-चढ़कर हिस्सा लेती, पर वहां भी उसे उसके रंग के अनुरूप पीछे कर दिया जाता।पर उसे कोई फर्क नहीं पड़ता।यह सब उसकी दिनचर्या में आ गया था। धीरे-धीरे जवानी की दहलीज पर बढ़ने के साथ उसके नैन नक्श छोटी से अच्छे निकल आए थे पर सांवले रंग के कारण वह पीछे ही रह जाती। वह बोलती कम ही उसे पता था उसे कोई नहीं सुनेगा। खामोशियां खामोश होती है और उसकी पीड़ा को समझने वाला कोई नहीं था। पढ़ाई में होशियार होने से कॉलेज में

छात्रवृत्ति मिल गई। फिर क्या था काजल को पंख मिल गए थे। वह चाहती थी कि पढ़ लिखकर अपने आप को दुनिया के सामने साबित करे।वह जानती थी कि रंग किसी की काबिलियत नहीं होता। इंसान गुणों से आगे बढ़ते हैं। माँ हमेशा कहती" थोड़ा सम्भल कर चला कर चेहरे पर कुछ लगा लिया कर, कोई शादी नहीं करेगा तो ऐसे ही बैठी रहेगी जिंदगी भर।"

"ना करें मुझे कोई फर्क पड़ता मैं तो नौकरी करूंगी तुम कौन सी शादी करके खुश हो "

मां बस चुप रह जाती उसे भी पता था कि जैसे वह शादी करके कहां खुश थी काजल की नौकरी लग चुकी थी। छोटी की शादी हो गई थी क्योंकि वह गोरी थी। काजल अपने आप में खुश थी वह माता-पिता के साथ थी। पिता अभी भी उसे कोसते हमारे सीने पर यह कब तक मूंग दलेगी। पता नहीं कब तक रहेगी यह शादी नहीं करेगी, अकेली रहेगी क्या, कुछ ऊंच-नीच हो गई तो बिरादरी में क्या मुह दिखाएंगे। काजल चुप सुनती रहती। बचपन से यही करती आई थी। एक दिन पिता शांत हो गए मां ने भी मरते मरते एक अधेड़ से उसका रिश्ता पक्का कर दिया। काजल एक बंधन से निकल दूसरे बंधन में बंध गई थी। कुछ दिन तो शादी के ठीक निकले। बड़ी उम्र में शादी के कारण वह माँ नहीं बन पाई। पति को भी अधिक सिगरेट पीने के कारण फेफड़ो का कैंसर हो गया। पर काजल ने हिम्मत नहीं हारी। पति की खूब सेवा की। वह मेहनत से नहीं डरती थी पर किस्मत के कारण हमेशा हार जाती। पति ठीक होने लगे पर बिस्तर पर आ गए। इंसान की नियति भी उससे कितनी बार तमाम कोशिशों के बाद भी उसकी मंजिल से मिलने नहीं देती।

पति का बिजनेस काजल ने सम्भाल लिया। वह दिन भर ऑफिस में लगी रहती। शाम को थककर लौटने पर पति को राह देखते पाती। फिर उसका समय पति का होता। शायद ये उसकी जिंदगी के सबसे अच्छे पल थे जब किसी को उसकी जरूरत थी, नही तो वह सबके लिये गैर जरूरी ही रही।

कुछ दिन बाद पति भी नहीं रहे, अब वह बिल्कुल अकेली रह गई।सारा दिन ऑफिस में बिताने के बाद रात उसे अपनी सी लगती। वह और रात दोनों काली, दोनों बहनें अपनी अपनी कहती। वह लिखती, रात सुनती।

और उन्ही कुछ रातों में यह उपन्यास लिखा गया। "गुलमोहर"

जो मेरी तरह है, कभी हार नहीं मानने वाला, सदा हरा, सदा भरा।

सारा कमरा शांत था, और काजल अपने व्यक्तित्व की आभा से चमक रही थी।

❑❑❑

दहलीज

उसने झाड़ू लगाकर दहलीज पर ऐसे पटकी जैसे जिंदगी का सारा कचरा झटक झटक कर निकाल देगी। दहलीज ही इतनी ऊंची थी तो घर का कचरा झाड़ू के साथ उठाकर या समेट कर ही फेंकना पड़ता। मृदुला जल्दी घर का काम निपटाकर काम पर जाना चाहती थी। सुबह जल्दी उठने के बाद से वह काम में लगी थी, पर उसका दिमाग साथ नहीं दे रहा था। उसने कुकर में दाल और भाजी लगा दी और रोटी का आटा लगाकर जल्दी-जल्दी रोटी बेलने लगी। खोली के कोने में लोहे के टेबल पर गैस रखी थी।रोटी बेलने के साथ साथ टेबल भी अपनी गति से हिलती, कितने ही बार सामान नीचे गिर जाता। मृदुला फिर करीने से सब जमा देती और काम करने लगती। रोहित को आवाज लगाती हुई वह तैयार होने लगी।

“ चल ना, रोहित उठ जा!आज फिर देर हो जाएगी, स्कूल का गेट बंद हो जाएगा।

रोहित अनमना सा उठा और खोली के टीन के दरवाजे को पटकते हुए आंगन में आ गया।

मृदुला फिर चिल्लाई” हां तोड़ दे! यह चिलगोजे जमीन से उगे नहीं है और ताव तो देखो। ताव दिखाना है तो अपने बाप को दिखा जिसने सिर्फ पैदा करने का जिम्मा लिया है बाकी सब मैं देखूं और वह उसके साथ मजे

करें साला पता नहीं कितनों के साथ सोएगा।"

मृदुला चिल्लाते हुए बाहर आ गई। जल्दी–जल्दी रोहित के हाथ पैर ध ुलाए। बारिश के कारण आंगन में काई जम गई थी। बहुत संभलकर चलना पड़ता, रोहित ने गुस्से में बाल्टी से पानी लुढ़का दिया जिससे वहां और कीचड़ हो गई थी। मृदुला बडबडाते हुए रोहित को तैयार कर रही थी।

"सारा पानी ढोल दिया, अब रहना कल तक बिना पानी के।तुझे पता है न कि कितना मेहनत से लाती हु पानी।"

गैस पर कुकर की सीटी बज रही थी मार खाने की वजह से रोहित रो रहा था। मृदुला को लगता जैसे वह कितने ही नाव पर सवार है एक को संभालने की कोशिश करती है तो दूसरी डगमगाने लगती है। लगता जैसे वह बहाव की विपरीत दिशा में ही चल रही है। आगे बढ़ ही नहीं पा रही। मृदुला ने दो रोटी अचार के साथ टिफिन में डाली और रोहित के बैग में रख दी। चलते चलते अपने को आईने में देखा अचानक से उसकी निगाह होठों के नीचे नीले निशान पर गई। उसे मल्टी वाले साहब की याद आ गई। रोहित को लगभग घसीटते हुए उसने खोली में ताला लगाया और मन में आए सारे गुस्से को एक कोने में थूक दिया और जल्दी–जल्दी बढ़ चली। गली के आखिरी छोर पर स्कूल था। मृदुला ने रोहित को स्कूल की गेट के अंदर किया और चिल्लाते हुए कहा

" छुट्टी के बाद सीधे घर आ जाना, उन आवारा लड़कों के साथ दिखा तो टांगे तोड़ दूंगी।"

मृदुला ने मुड़कर भी नहीं देखा और रोहित दूसरे गेट से फिर उन्ही लड़कों में जा मिला था।

मृदुला पास की मल्टी में लोगों के घर काम करती थी। यहां भी उसने बडी मुश्किल से काम पाया था। वह तो चौकीदार को कैसे पटाया था वह जानती है। मृदुला 30–40 वर्ष की सुघड़ महिला थी। बचपन में ही किसी के प्रेम में पड़ गई। 18 साल में घर से भाग कर शादी कर ली। तब से ही मां–बाप से रिश्ता टूट गया। मां बाप ने भी कोई सुध नहीं ली। पति के साथ कुछ दिन तो अच्छे निकले, वह पास के कस्बे में मजदूरी करता था। मृदुला उसके साथ जाती। दोनों शाम ढले थककर वापस आते।तब मृदुला सोचती कि वह बड़ी किस्मत वाली है जो इतना प्यार करने वाला पति मिला पर

किस्मत में यदि संघर्ष है तो वह सामने आते ही है। संघर्ष तो वह अभी भी कर रही थी पर पति साथ था। साल 2 साल में ही मैं ही मृदुला से उसका मन भर गया। उसने दूसरी औरत को पाट बैठा लिया। मृदुला पर इल्जाम लगा दिया कि वह बांझ है, बच्चा नहीं कर सकती। यह बात सिर्फ मृदुला को पता थी कि वह बांझ है कि.... उसे दिन जैसे ही उसे पता लगा वह बहुत रोइ। पति को बहुत कोसा

– "मैं बांझ हूं तो तू कौन सा उपजाऊ खेत है जब बीज सही नहीं है तो फसल कैसे उगेगी। जा उस दूसरी के साथ भी बच्चा पैदा करके बता।"

मृदुला अकेली रह गई। इन दो–तीन सालों में उसकी कुछ पहचान तो हो गई थी। लोगों की मदद से फिर कुछ काम शुरू किया। सर छुपाने की जगह फिर भी बची थी। साथ काम करने वालों के साथ कुछ दिन तो बीत गए पर कौन कितने दिन रखता। साथ की सहेली ने सलाह दी,

" तू भी किसी के साथ पाट बैठ जा, तुझे घर भी मिल जाएगा और साथ भी।

मृदुला बोली "ऐसे कैसे किसी के साथ ... एक पर विश्वास किया था उसने ही छोड़ दिया। सब एक से ही होते हैं "

"तेरी उम्र ही क्या है, तेरी पूरी जिंदगी पड़ी है सामने।

"वह हरीश पूछ रहा था तो मुझे तेरे लिए। तू कहे तो बात करूँ।"

मृदुला बसना तो चाहती थी। डरते डरते उसने हामी दे दी। कुछ दिन में साथ के लोगों के बीच में मृदुला और हरीश ने शादी कर ली। हरीश मृदुला से लगभग 10 साल बड़ा था ठेकेदारी करता था, स्वभाव से भी अच्छा था। मृदुला का बहुत ध्यान रखता। उसे भी लगा कि चलो पहले कहीं धोखा खाया तो अब तो सही आदमी मिला। शायद ईश्वर को यही मंजूर है। दिन बीतते गए, हरीश और मृदुला सुबह से काम पर निकलते और शाम ढले घर आते। हरीश ने बस्ती में दो कमरों का मकान भी किराए पर ले रखा था। मृदुला उसे ही सजा कर रखती। सुबह घर का सारा काम निपटा कर जाती फिर शाम को आकर बचा काम करती। मृदुला धीरे–धीरे पहले पति और उसकी यादों से बाहर आ चुकी थी। एक शाम जब वह घर पहुंची तो 10–15 आदमी पहले ही घर में बैठे थे। सब हरीश से बहस कर रहे थे शायद कुछ उधार की बात थी। तब मृदुला को पता लगा कि हरीश सट्टा खेलता है और उसने

कई लोगों से पैसा लेकर रखा है। आज वो सभी मिलकर हरीश को घेरे हुए हैं। मृदुला के देखते ही देखते उन लोगों ने हरीश से मारापीटी शुरू कर दी और हरीश जमीन पर लहूलुहान पड़ा था। मृदुला तुरंत उसे अस्पताल लेकर भागी। हाथापाई में हरीश के पैर की हड्डी टूट गई थी। मृदुला के पास इतना पैसा भी नहीं था कि वह इलाज करा पाती। हरीश की तो सारी कमाई सट्टे में लग जाती थी। जमा पूंजी के नाम पर कुछ नहीं था।

हरीश बिस्तर पर आ गया। मृदुला रोज सुबह से हरीश का काम कर घर के काम निपटाती फिर काम पर जाती। उसने मजदूरी के साथ पास की मल्टी के घर में काम कर लिया था। घर चलाने के लिए अधिक आमदनी चाहिए थी ताकि पैसा जमा कर हरीश के पैरों का इलाज कर सके। वह मेहनत से नहीं डरती थी पर एक कदम आगे बढ़ाती और किस्मत उसे दो कदम पीछे धकेल देती। महीने दर महीने बीत रहे थे। हरीश घर में पड़े पड़े चिड़चिड़ा हो गया। वह शाम को थककर घर आती तो वह उस पर खीजता। गलत इल्जाम लगाता।

" मैं बिस्तर पर हूं तो क्या मुझे पता नहीं, तू क्या करती है। किसके साथ बात करती है। ज्यादा हवा में मत उड़, " और जो भी उसके हाथ में आता उठाकर मार देता। मृदुला को भी पता था कि यह सब हरीश के दोस्तों के कान भरे हैं जो उसके जाते ही उसके पीछे से हरीश के पास आ जाते हैं। उन दोस्तों की नियत भी पता थी उनमें से एक ने मृदुला को रास्ते में रोककर कहा भी था

"चल मेरे साथ वैसे भी पाट कर बैठी है, अब तेरे पति में कहां दम बचा है लंगड़ा क्या करेगा, चल मैं तुझे ऐश कराऊंगा।"

मृदुला कुछ बोली नहीं बस हाथ छुड़ाकर घर आ गई, उसे अपनी बेबसी पर बहुत रोना आया। पहले पति ने तो उसे दगा दिया और दूसरा अपाहिज हो गया तभी लोगों की निगाहें उसपर पड़ने लगी। दोस्तों के भड़काने के कारण पति भी उसे पर शक करने लगा। जैसे-जैसे खुद को बचाते हुए काम कर रही थी। एक दिन अचानक उसके साथ वाली सहेली दौड़ते हुए आई और बताया कि हरीश की लाश पटरी पर पड़ी है मृदुला बदहवास सी दौड़ रही थी। अपने से बेखबर सीमेंट मिट्टी से भरी। क्यों ईश्वर इतनी परीक्षा ले रहा है। क्या भगवान मेरी किस्मत में सुख लिखना भूल गए हैं।

हरीश की लाश क्षत विक्षत सी पटरी के आसपास पड़ी थी। हाथ पैर धड़ सब अलग-अलग। बहुत देर में मृदुला वहीं बैठी रही। साथ वालों ने लाश को इकट्ठा कर अंतिम संस्कार कर दिया।

मृदुला फिर अकेली रह गई बिल्कुल अकेली, लोगों की नजरे उसे और नोचने लगी। कुछ दिन बाद मकान मालिक ने भी तकादा लगाना शुरू कर दिया। वह समझ नहीं पा रही थी कि जिंदगी आखिर चाहती क्या है। वह जिस मल्टी में काम करती थी वहां की चौकीदार से बात कर इधर-उधर से कुछ कर्ज लेकर पटरी किनारे बने टपरों में एक खोली खरीदी। उसी के जैसे कितने ही लोग इन टपरों में रह रहे थे। बस एक से लगकर एक टिन और बांस की चिमपालियों को जोड़कर कमरे नुमा घर थे वे, घर भी इसलिये क्योंकि वहां जिंदगियां गुजर रही थी। मृदुला यहाँ सुरक्षित महसूस करती। अब वह स्थायित्व चाहती थी। उसने मिट्टी गारे का काम छोड़ दिया और मल्टी में ही कुछ घरो में काम करने लगी। धीरे-धीरे उसका काम जमने लगा। समय बीत रहा था मृदुला को लगने लगा कि अब शायद वह चैन से रह सकती है पर नियति कुछ और ही चाह रही थी। जहां वह काम करती थी वहां के एक साहब ने उसके साथ जबरदस्ती की और उसे धमकाने लगे। अकेली औरत पर सबकी नजरें होती है, और इतने सालों में वह आदमी की नीयत को समझ गई थी।वह काम नहीं छोड़ना चाहती थी इसलिए चुपचाप उनकी बातें मानती रही। यह बात पूरी मल्टी में फैल गई अब तो हर कोई उससे बस यही चाहता।

उसने भी सोच लिया था कि शायद यही उसकी किस्मत है। औरत की मजबूरी उससे वह सब करवा लेती है जो वह कभी सोचती भी नहीं। अकेली औरत चाहे जितने भी कोशिश कर ले पर पूरी जिंदगी बिताने के लिए किसी आदमी का सहारा चाहिए। वह भले की कितनी भी कर्मठ बन जाए, कितनी भी स्वालम्बी बन जाए पर दुनिया उसे रहने नहीं देती। मृदुला ने चौकीदार को अपनी ढाल बना लिया था। वह अधेड़ था पर था तो आदमी। चौकीदार को सीधा खाना मिल जाता और कभी कभी मृदुला भी। इसी बीच वह माँ भी बन गई, बच्चा पता नहीं किसका था। पर उसके जीने का सहारा बन गया। उसकी जिंदगी का मकसद सिर्फ रोहित था वह जीने की, पैसा कमाने की, बड़ी कीमत चुका रही थी। किसी भी कीमत पर सिर्फ अपने बच्चे की

परवरिश कर रही थी। वह यही चाहती थी कि उसका बेटा इस सामाजिक दलदल से दूर रहे। औरतों की इज्जत करना सीखें। ताकि फिर कोई दूसरी मृदुला न जन्मे।

मृदुला चलते-चलते मल्टी के गेट पर आ गई चौकीदार उसकी तरफ देखकर मुस्कुराया और फ्लेट 205 की चाबी दे दी।

❑❑❑

सिचुएशन शिप

हल्की बारिश हो रही थी प्रभात कॉलेज के गेट पर खड़ा आती जाती लड़कियों को देख रहा था। प्रभात और उसके दोस्तों का ये रोज का ही काम है। कॉलेज आना और लड़कियों को छेड़ना। कॉलेज की सारी फैकल्टी उन्हें जानती थी कि ये कभी क्लास में नहीं बैठते बस आवारागर्दी करते हैं। दूसरों को परेशान करते हैं। प्रभात कितनी लड़कियों से चक्कर चला चुका था। कॉलेज में वह प्ले बाय के रूप में मशहूर था। कितनी ही बार इसकी शिकायत उसके घर पहुंची पिताजी ने कितनी ही बार उसे फटकार लगाई पर प्रभात सुधरने का नाम नहीं लेता। पापा से कहता

– "पापा आपको क्या पता है, यह आजकल मॉडर्न जमाने का चलन है। जैसे आप बिजनेस में फायदा नुकसान देखते हो वैसे ही आजकल प्यार में फायदा नुकसान देखा जाता है जिससे आपको फायदा हो उसे अपने साथ रखो नहीं तो अपने-अपने रास्ते। "

"पर बेटा किसी की भावनाए, उसका मन"

" उसका क्या पापा, सिचुएशन के अनुसार सब होता है। बहुत प्रैक्टिकल है सब।जिसको लगता है कि वह मेरे जैसे स्मार्ट लड़के के साथ रहे, घूमें, डेट करें वह मेरे साथ रहती है।" लड़कियों के पास भी बॉयफ्रेंड की जितनी लंबी लिस्ट होगी वह उतनी स्मार्ट होगी वैसे ही लड़कों के साथ भी होता है जिस लड़के के पास जितनी गर्लफ्रेंड वह उतना स्मार्ट। और वैसे भी यह

लड़कियां मुझे समझ नहीं आती बहुत नखरे करती है इसलिए तो मेरी पक्की गर्लफ्रेंड नहीं बनी अब तक"

पापा बस सुन रहे थे वह चाहते थे कि बड़े हो रहे बेटे को दोस्त की तरह समझाये, पर उन्हें समझ आ गया था कि जमाना उनकी सोच से बहुत आगे बढ़ गया था। उन्होंने बेटे के समय के हवाले कर दिया और समय ही उसे समझाएगा ऐसा सोचकर वह चुप हो गए। प्रभात के पिता बहुत बड़े बिजनेसमैन है रूपयो में बचपन से खेलता प्रभात घर से ही रिश्तों की गरमाहट को नहीं मैं समझ पाया। उसके लिए सब बिकाऊ था कोई भी चीज, इंसान का प्यार भी। प्रभात अपनी जिंदगी में व्यस्त हो गया और पापा अपनी।

असली प्यार ढूंढते ढूंढते वह फर्स्ट ईयर में आए अभय से मिला। रैगिंग के दौरान सभी जूनियर पार्किंग में ही रोक दिए गए सबको लाइन से खड़ा कर दिया।

प्रभात सीनियर्स का लीडर था सारे जूनियर का नाम पूछने लगा। सारे जूनियर्स घबराते हुए उत्तर दे रहे थे, और उनके बोलने की नकल उतार कर सीनियर्स उनका मजाक उड़ा रहे थे। तभी अभय की बारी आई। अभय बहुत ही गंभीर और सुलझा हुआ लड़का था। उसके पिताजी सरकारी महकमें में क्लर्क थे। चार भाई बहनों में मंझला अभय अपनी जिंदगी में कुछ बनना चाहता था। पिता भी बहुत मेहनत करते कि उनके बच्चे कुछ अच्छे मुकाम पर पहुंच जाए। जैसे ही प्रभात अभय के सामने आया, उसकी नजरें अभय के चेहरे पर गढ़ गई। प्रभात बस उसे देख रहा था। उसके मन की उथल पुथल शांत हो गई। तभी अभय के बगल में खड़े लड़के ने उसे बोलने का इशारा किया।

" मेरा नाम अभय गुप्ता है, , मैंने बीबीए फर्स्ट ईयर में एडमिशन लिया है।"

प्रभात अभी भी अभय को ही देख रहा था। अभय चुप खड़ा था

"अच्छा तो तुम अभय हो, वेलकम, वेलकम, तुम्हारा स्वागत है हमारे कॉलेज में। चलो रे रैगिंग खत्म, जाने दो बच्चों को"

प्रभात मोटरसाइकिल पर बैठता हुआ बोला। सभी साथी प्रभात की इस व्यवहार से हैरान थे क्योंकि सबसे ज्यादा मजे प्रभात ही लेता था फिर उनकी कैंटीन में पार्टी होती। प्रभात के पैसों के कारण हमेशा 10 12 लड़के

लड़कियों से घिरे रहता। सबको खिलाता पिलाता मौज करता। समय–समय पर लड़कियां बदलता है पर उसके मन को तसल्ली नहीं मिलती। पता नहीं क्या चाहता था प्रभात।

कॉलेज में पढ़ाई शुरू हो गई थी। अभय रोज क्लासेस अटेंड करता। वह पढ़ाई में भी होशियार था। धीरे–धीरे वह सबका चहेता बन गया। प्रभात रोज उससे बात करने की कोशिश करता पर अभय उससे बचने की कोशिश करता रहता। उसे कॉलेज में पहले दिन ही प्रभात से ना बात करने के हिदायत दे दी गई थी। प्रभात अभय से बात करने की कोशिश में लगा था कि एक दिन उसे मौका मिल गया। अभय कॉलेज आने के लिए बस स्टैंड पर खड़ा था तभी प्रभात वहां से निकला अभय को देखते ही उसने बिल्कुल अभय के सामने जाकर बाइक खड़ी कर दी।

" अरे! अभय तुम क्या बस से कॉलेज जाते हो"

" जी सर"

" सर" प्रभात अभय को देखते हुए बोला

"जी, वह कॉलेज में सीनियर्स को सर कहते हैं ना"

" ओके, पर तुम मुझे प्रभात कहा करो" "जी"

"अरे, यह जी भी छोड़ो चलो मेरे साथ में तुम्हें छोड़ देता हूं"

" नहीं मैं चला जाऊंगा आप परेशान ना हो"

" अरे चलो भी" कह कर प्रभात ने अभय का हाथ पकड़कर अभय को बाइक पर बैठा लिया और बाइक कॉलेज की तरफ बढ़ा दी।

कॉलेज के गेट पर अभय को छोड़ता हुआ प्रभात बोला – "तुम्हें किसी से डरने की जरूरत नहीं है कोई भी जरूरत हो तो मुझे बताना। अब रोज प्रभात बस स्टैंड के चक्कर लगाता है जैसे ही अभय वहां आता उसे बैठाकर कॉलेज छोड़ देता। अभय को लगता फिजूल ही लोग प्रभात को बुरा कहते हैं यह तो बहुत अच्छा है। अभय भी प्रभात से प्रभावित हो रहा था। वह भी रोज उसकी राह देखता। कॉलेज में भी उसके साथ ही रहता। समय बीत रहा था।अभय तीसरे साल में आ गया। प्रभात अब कॉलेज का एक्स स्टूडेंट रह गया था। मगर फिर भी उसकी बैठक पार्किंग में ही थी। अभय ने पीजी में एडमिशन ले लिया। वह अधिकांश समय प्रभात के साथ ही गुजरता। प्रभात उससे कहता – "अभय कहां पढ़ाई के चक्कर में लगे हो, मुझे देखो

कितनी मजे करता हूं, क्या करना है पढ़कर, कौन सी नौकरी मिल जाएगी। तुमको मैनेजर रख लूंगा मैं, तुम चिंता मत करो। मेरे पापा की कंपनी है"

" प्रभात तुम तो रहीस हो। पर मेरे पापा का जो स्टेटस है वह मुझे पता है। अरे तो तुम्हारे पापा को भी नौकरी दे देंगे"।

"प्रभात सब इतना आसान नहीं है",

"तुम जैसा चाहोगे वैसा ही होगा। चिंता मत करो।"

आज कॉलेज की आखिरी दिन था। कॉलेज में फेयरवेल पार्टी चल रही थी। बच्चे फिर मिलेंगे कहकर आपस में मिल रहे थे।प्रभात भी वहीं था। वह अभय की राह देख रहा था। रात बढ़ रही थी वह नहीं आया। प्रभात ने फोन किया "अभय तुम फेयरवेल में नहीं आए हो"

" प्रभात! मम्मी..."

और अभय रोने लगा। उसी समय प्रभात पार्टी छोड़कर अभय के घर पहुंच गया। अभय की मम्मी गुजर गई थी। अभय प्रभात को देखते ही फूट-फूट कर रो दिया वह किसी छोटे बच्चों सा प्रभात से चिपक कर हो रहा था। अभय एक गली में छोटे से दो कमरों के मकान में रहता था। जिसमें उसके तीन भाई बहन और माता-पिता रहते। अभय की मम्मी बहुत दिनों से बीमार थी।

"अभय तुमने बताया नहीं कि तुम्हारी मम्मी इतनी बीमार थी"

" हां! वह बताता प्रभात "

"और कब बताते" प्रभात खीज कर बोला।

प्रभात दिन भर अभय के साथ रहा। बाकी सारे कार्यक्रम में भी अभय की परछाई बन रहा।माँ के सारे कार्यक्रम अच्छे से हो गए।अभय अपने को बहुत अकेला महसूस कर रहा था।प्रभात उसे अधिकतर समय अपने साथ ही रखता। एक दिन प्रभात ने अभय से दिल की बात कह दी।

"अभय मैं तुम्हारे साथ सारी जिंदगी गुजारना चाहता हूं। क्या तुम मेरा साथ दोगे।"

" प्रभात यह क्या कह रहे हो। ऐसा कैसे हो सकता है। मैं ऐसा नहीं कर सकता। मेरे पापा, मेरे भाई बहन, सब की जिम्मेदारी मुझ पर ही है और समाज?" " "मैं समाज को नहीं मानता, तुम समाज को छोड़ो तुम्हारे परिवार को मैं पाल लूंगा। तुम बस मेरे साथ रहो"

नहीं प्रभात, यह संभव नहीं। मैं तुम्हारे जैसा नहीं है मैं अपने परिवार को नहीं छोड़ सकता। न हीं समाज को छोड़ सकता हूं।

"ठीक है, अब तुम जैसा चाहो। मैं अभी जा रहा हूं तुम सोच कर फैसला करना" कहकर प्रभात चला गया। अभय उसे जाता देखता रह गया। उसने कभी सोचा भी नहीं था कि प्रभात ऐसी बात कह जाएगा।वह भी प्रभात को पसंद करता था पर इस तरह कभी नहीं सोचा था।अभय ने प्रभात को स्पष्ट कर दिया कि वह उसका बहुत सम्मान करता है पर जिस तरीके से वह चाहता है वैसे वह नहीं रह सकता। प्रभात ने उसे बहुत समझाने की कोशिश की पर वह नहीं माना। "अभय तुम्हे किसी चीज की कमी नहीं होगी, हम समाज से दूर चले जायेंगे।"नही प्रभात, हम समाज से दूर नहीं जा सकते, जँहा जाएंगे वहां समाज मिलेगा ही।और जिस तरह से तुम चाहते हो वह रिलेशन समाज मे माना नहीं जाता।"

"मैं मानता हूं कि तुमने मेरे लिये बहुत कुछ किया है पर तुम्हारी यह बात मैं नहीं मान सकता"।

"ठीक है अभय, तुम तुम्हारे हिसाब से रहो, पर जिंदगी में कभी भी मेरी जरूरत पड़े तो मुझे याद करना"

कहकर प्रभात घर आ गया।अभय पढ़ाई खत्म कर चुका था तो नौकरी की तलाश में लग गया।अपने अच्छे अकादमिक रिकॉर्ड के कारण उसे अच्छी कम्पनी में मैनेजर की नौकरी मिल गई।वह धीरे धीरे पिछली सारी बाते भूल गया था।उसके लिए प्रभात की बहन का रिश्ता आया है यह बात उसने प्रभात को बताई।आज प्रभात के पापा और कुछ रिश्तेदार अभय के घर जाने वाले है तभी पापा ने प्रभात को फोन लगाया।"प्रभात तुम कितनी देर में घर आ रहे हो, यहाँ सब तुम्हारी राह देख रहे है"।

"आ रहा हु पापा" दूसरी तरफ से बस इतनी आवाज आई और फोन कट गया।प्रभात तालाब के किनारे बैठा था, जँहा वो अभय से साथ घण्टो बैठा रहता था।उसके मन मे कितने सवाल जवाब आ जा रहे है।कितनो को तो वो निकाल चुका था।पर उनमें घिरता जा रहा है।पापा का फोन फिर आ गया

"प्रभात तुम आ रहे हो या हम...."

उसने फिर फोन काट दिया। वह सुबह ही घर से भाग कर यहां आ गया था।वह सब बातों से दूर, सब लोगो से दूर हो जाना चाहता है।प्रभात ने अपनी

जिंदगी को जितना प्रेक्टिकल किया, वह उतना ही उसमें फंसता गया।आज उसकी छोटी बहन की सगाई है पापा बार बार उसे फोन कर रहे है पर वह जाना नहीं चाहता। शादी, प्यार, रिलेशनशिप इन सबसे दूर हो जाना चाहता है। इंसान ने समाज मे रहने के लिये रिवाज बनाये, बन्धन बनाये और उसमें खुद ही फंसकर रह गया।इंसान ने शरीर को तो बांध लिया पर मन.... मन को बांधने के लिये को बन्धन नहीं बना। मन तो पंख लगाकर उड़ता है कभी यंहा कभी वहाँ उसकी थाह पाना कठिन है प्रभात भी इसी स्थिति में फंस गया था। अपनी बहन के साथ अभय को वह सोच भी नहीं सकता है अभी तो यह शादी रोकनी होगी यह सोच वह घर की और चल दिया द्य

❒❒❒

आउटडेटेड

रमेश फल्ली दाने की रेहड़ी समेट आज की कमाई गिन रहा था। चिल्लर और नोट अलग-अलग गिन कर जेब में रखी। रोज उसे 800 से 1000 की कमाई होती है जिसमें से कच्चे सामान के लिये अलग कर मुनाफा अच्छा हो जाता। शाम की रेहडी को वही बड़ी दुकान की सीढ़ी के नीचे दबाकर वह स्टेशन आ गया। 9'10 वाली लोकल का अनाउंसमेंट हो रहा था। आने जाने वाले स्टेशन पर चहल कदमी कर रहे थे। रमेश वहीं बेंच पर बैठ गया। उसके कंधे पर तेल से चिकट थैली टंगी थी इसमें हाथ डालकर वह कुछ ढूंढने लगा। सुबह लाई रोटियां अखबार मे लिपटी रखी थी। रमेश ने रोटी पर फल्ली दाने में मिलाने वाला नमक मिर्च मसाला डाला और रोल बनाकर धीरे-धीरे चबाने लगा। वह आते जाते लोगों को देख रहा था। काम से लौटने वाले लोगों की भीड़ एक के पीछे एक चलती जा रही थी।

लोकल के रुकते ही भीड़ का सैलाब स्टेशन पर फैल जाता। लोगों को घर पहुंचने की जल्दी रहती। लोग जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाते हुए स्टेशन पार करते। रमेश उसी बेंच पर बैठा रोटी खाकर लोकल की राह देख रहा था। तभी एकदम भीड़ आई और उसके साथ ही लोकल भी आ गई। रमेश भी भीड़ में शामिल हो गया। लोकल में चढ़ते ही उसने अपनी पसंद का कोना पकड़ लिया। वही टिककर खड़ा हो गया। अचानक बारिश शुरू हो गई। मुंबई में बारिश का कोई ठिकाना नहीं, कभी भी शुरू हो जाती है। वह गेट

के कोने में खड़ा रहा था तो पानी की बौछार उस पर भी पड़ने लगी। उसने थैली में से एक प्लास्टिक निकाली और सिर पर लगा ली, और थोड़ा अंदर सट कर खड़ा हो गया। लोकल अपनी गति से आगे बढ़ रही थी। लगता जैसे उसे भी मंजिल तक पर पहुंचने की जल्दी है। कुछ देर में अगले स्टेशन पर अनाउंसमेंट हुआ, रमेश को 4 स्टेशन बाद उतरना है, वह निश्चिंत था। अब तक कुछ लोग उतर चुके थे वह एक खाली जगह देख वहीं बैठ गया।

सामने की सीट पर एक नया जोड़ा बैठा था। महिला पुरुष के कंधे पर सर रखकर सो रही थी। ट्रेन के चलने से महिला का सिर हिल रहा था पुरुष उसे बार-बार उसे ठीक कर देता। रमेश को उसकी जगह सरला दिख रही थी। सरला भी इसी तरह काम से लौटने पर उसके कंधे पर सिर रखकर सो जाया करती। वह और सरला एक ही फेक्ट्री में काम करते थे। सरला कुछ पढ़ी-लिखी थी तो उसे फैक्ट्री में लिखा पढ़ी का काम मिल गया था। रमेश उसी फैक्ट्री में मजदूर था। दोनों की सोच और रास्ते वहीं से अलग-अलग हो गए। सरला रमेश से थोड़ा ज्यादा कमाती थी। कभी-कभी वह रमेश को ताने कसती। पिता की गरीबी के कारण वह रमेश से ब्याह दी गई थी। अपने पढ़े लिखे और रमेश के अनपढ़ होने का मलाल उसे हमेशा रहता। रमेश बहुत कठिनाई और मेहनत से आगे बढ़ा था पैसे खर्च करने में भी बहुत बारीकी रखता। सरला हाई सोसाइटी की बातें करती।

वह रमेश से कहती "तुम इसी फैक्ट्री में मजदूरी करते हो और मैं इस फेक्ट्री के मालिकों के साथ काम करती हूं। तुम और कहीं काम क्यों नहीं ढूंढ लेते। ऐसे मजदूरों से रहते हो, अच्छे कपड़े पहना करो"

" मैं जो काम करता हूं वैसा ही रहूंगा ना और अच्छे कपड़े पहनकर मजदूरी तो नहीं कर सकता"

"तो तुम रहो आउटडेटेड"

इस तरह की अनबन दोनों में कितनी बार हो जाया करती। दोनों का जीवन बस इसी द्वंद जैसे चल रहा था। इसी बीच उनकी एक संतान भी हुई। अब सरला रमेश से पूरी तरह कटने लगी। वह अपने बेटे को ऑफिस ले जाती। दिनभर अपने साथ रखने के बाद शाम को भी रमेश को नहीं देती। वह कहती

"तुम उसे अपने जैसा मजदूर बनाओगे, मैं इसे पढ़ा लिखा कर स्मार्ट

बनाऊंगी तुम्हारे जैसा आउटडेटेड नहीं"

सरला ने बेटे को बोर्डिंग में दाखिल करवा दिया मालिक से पैसा लेकर उसकी फीस भरती रही। रमेश कितनी बार सरला से कहता

"बेटे को यहीं ले आते हैं, वह मेरा भी बेटा है मैं पढ़ाऊंगा उसे"

"तुम क्या जानो पढ़ाई के बारे में... अनपढ़ हो तुम"

मैं अपने बच्चों को पढ़ा लूंगी"

सरला अपने काम में लगी रहती और रमेश अपने। बेटा कभी-कभी छुट्टी में घर आता वह भी पिता से दूर होता जा रहा था। बेटा बड़ा हो रहा था। हमेशा सरला उसे पिता में बुराइयां ही दिखाती उसे बताती कि वह कैसे उध ार लेकर पढ़ा रही है। बोर्डिंग से उसकी नौकरी किसी बड़ी कंपनी में लग गई। सरला भी अपने अनुभव से कंपनी में हेड क्लर्क बन गई और रमेश सुपरवाइजर। बेटे की नौकरी के साथ अपनी कंपनी ने उसे बड़ा घर और गाड़ी भी दी। बेटे ने माता-पिता को अपने पास बुला लिया पर यहां रमेश की इज्जत बस एक्स्ट्रा सामान जैसी ही थी। सरला तो फूली ही नहीं समाती की उसका बेटा बड़ी कंपनी में नौकरी कर रहा है। पिता अब भी वैसे ही थे। बेटा उनकी आदतों पर बार-बार उनका तिरस्कार करता। उन्हें आउटडेटेड कहता। पिता उसे समझाते

"बेटा पैसों की कदर करोगे तो पैसा तुम्हें पूछेगा, ऐसे फीजुलखर्ची करने से तुम पैसा जोड़ नहीं पाओगे"

बेटा चिढकर कहता "आप मेरी चिंता मत करो मैं मेरा देख लूंगा"

सरला भी बेटे की तरफदारी में लगी रहती, रमेश की हर बात में नुष्क निकलना उसकी आदत बन गया था। वह बेटे के साथ खुश रहती बस। रमेश बेटे और पत्नी को आदतों से तंग आ गया था उसने सोचा जब मेरी यहां इज्जत ही नहीं तो इस घर में रहकर क्या करूंगा। उसने जरूरी सामान बांधा और घर से निकल पड़ा। उसके जाने से किसी को कोई फर्क नहीं पड़ा क्योंकि मां बेटे दोनों और बेफिक्र हो गये। रमेश फिर अपने पुराने मोहल्ले में आ गया समय बिताने के लिए कुछ काम करना जरूरी था रमेश ने फल्ली दाने बेचने का काम शुरू किया उसके पास कुछ पैसे जमा थे उनसे मूंगफली दाने खरीद कर उन्हें स्टेशन के बाहर बेचने लगा। आपनी पैसा बचाने की आदत के कारण मुनाफा भी होने लगा। धीरे-धीरे रमेश इस काम में रमने

लगा। वह सुबह की 8:50 की लोकल से चार स्टेशन पर उतर जाता अपनी रेहडी जमाता। उसने एक छोटी से तसले में अपनी दुकान जमा रखी थी। वह तसले में फल्लीदाने बिछाकर उन पर मिट्टी के डूबले में कंडे जलाकर रखता जिससे डूबले के नीचे के दाने गर्म रहते, लोग गर्म दाने बहुत पसंद करते। ट्रेन में अगले स्टेशन का अनाउंसमेंट होने लगा रमेश ट्रेन से उतर गया वह कभी आउटडेटेड नहीं था क्योंकि उसे समय के साथ चलना आता था।

❐❐❐

मुकद्दम

दिन निकला ही था कि सूरज की तपिश बढ़ने लगी। दूर तक देखने पर डामर की सड़क पिघलती सी लगती। पशु पक्षी क्या पेड़ पौधे भी इतनी गर्मी के मारे झुलस रहे थे। सुंदर जैसी ही जागा एक गर्म हवा का थपेड़ा उसके पूरे शरीर को झुलसा गया। वैसे ही सारी रात गर्मी के कारण नींद नहीं आई। तिरपाल का बिछौना वैसे भी कहां आराम देता। जिस करवट सोता पसीने से भीग जाता, वह बाहर आकर हाथ पांव धोता और सोने की कोशिश करता, पर गर्मी भी अपना प्रचण्ड रूप दिखा रही थी। सुबह-सुबह आंख लगी ही थी कि फिर खोली के दरवाजे पर आड़ के लिए टांगे कपड़े से गर्म हवा आने लगी दरवाजे से। सुंदर उठकर होली के बाहर रखी बाल्टी के पानी से हाथ में होने लगा। उसने अंदर जाकर देखा मीना और 2 बरस का बेटा माधव सो रहे हैं। सुंदर ने एक फटी चादर ढूंढ का दरवाजे पर टांग दी ताकि गर्म हवा कुछ कम हो जाए। हलचल सुन मीना भी जाग गई। "उठ गए तुम"

"हां"

"चाय"

"हां"

मीना ने स्टोव जलाया। अचानक स्टोव के भभके से फिर पूरी खोली में गर्माहट और तेल की बदबू फैल गई। आवाज से माधव भी जाग गया।

मीना चाय की तपेली चढ़ा माधव को फिर सुलाने की कोशिश करने लगी।

" यह उठेगा तो दुध मांगेगा, कल तो उधारी में लाई थी। आज तो गवलन उधार न देगी।

" तू रुक, मैं देखता हूं। गवली से कुछ काम की बात करता हूं शायद आज की धाड़की तो निकल जाएगी। मीना ने बिना दूध की चाय दो कप में छान ली। काली चाय से सफेद धुंआ ऐसे निकल रहा था जैसे वह भी अपने अंदर की गर्मी को निकाल देना चाहता हो और इस कैद से बाहर हो जाना चाहता हो।

सुंदर ने सोते हुए माधव को देखा कितना मासूम है इसने भी क्या कर्म किए होंगे कि मुझ मजदूर के घर पैदा हुआ किसी अमीर के घर जाता तो राज करता। वह जल्दी से चाय खत्म कर खोली से बाहर आ गया। कल चौक पर देरी से पहुंचा था तब तक मुकद्दम मजदूर ले गया था। आधे दिन की मजदूरी चली गई फिर छुटपुट कम कर दिन निकला। बेचारे बच्चे के दूध के पैसे भी नहीं जुड़ पाए। चौक तक पहुंचने में काम से कम 2 घंटे लगते। पैदल कितनी तेज चलता। बाकी के लोग साइकिल से आते तो जल्दी पहुंच जाते हैं। वह निकलने वाला ही था कि मीरा ने आवाज लगाई

"कुछ खा तो लेते! गर्मी के दिन है"

"ला मिठाई ला रही है क्या?"

"हां मिठाई नसीब में होती तो यहां खोली में क्यों रहते"

कहते हुए रात की बासी रोटी पर नमक और तेल लगाकर सुंदर को पकड़ा दी। "एक रुमाल में बांध दे, दोपहर में खा लूंगा।। अभी तो मन नहीं है। सुंदर के चेहरे पर कितने ही भाव आते जाते रहे मीना उन्हें पढ़ने की कोशिश कर रही थी कि सुंदर चल दिया।

वह जल्दी से जल्दी चौक पर पहुंचाना चाहता था। वह तेज चल रहा था पर गर्मी और प्यास उसे थकाएं देती। ऐसा लग रहा था सूरज सारी ध रती की नमी को सोख लेगा। सड़क किनारे लगे बड़े से पेड़ के नीचे सुंदर खड़ा हो गया। गमछे से पसीना पोंछ पानी पिया और वहीं बैठ गया। छांव में और राहगीर भी खड़े थे। कोई मजदूर कोई किसान सबकी अपनी-अपनी मंजिल थी पर सबको जाना एक ही रास्ते पर था।

" इस साल तो गर्मी खाए जा रही है"

“हां भैया!अभी फागुन में ही ये हाल है तो वैशाख असाढ़ में क्या होगा”

“भैया, नहर सूख गई है, ट्यूबवेल चलने को सरकार बिजली नहीं देती। आदमी पसीने से खेत सींच रहे है। लागत भी नहीं निकलती, लोग बार खेती छोड़ मजदूरी में जा रहे हैं।

“ मजदूरी भी कहां मिल रही है, भाई उसमें भी मुकद्दम मोल भाव करता है। इतने में चलो, कम रेट करो, अब जो रेट है वही तो रहेगा ना, चाहे काम करवाओ। कितनी बार निकल जाता है दिन और मजदूरी नहीं मिलती। सरकार कुछ कहती है मालिक कुछ। हम बीच में पीसते हैं।

“रोज कमाए रोज खाएं, फिर जोड़े क्या। दिन भर की धाड़की 300 से 400 इसमें रोज के राशन सब्जी में ही पैसा खत्म हो जाता है फिर बार त्यौहार लुगाई बच्चों का मुंह पोंछकर मनाने पड़ते हैं। कितनी ही बार फांको की नौबत आ जाती है।”

सुंदर बैठे–बैठे सब सुन रहा था। वह बातचीत में शामिल नहीं था पर था तो उनमें से ही।

“चलो भैया हमारी किस्मत में आराम कहां... चलो सभी उठ खड़े हुए। सुंदर भी खड़ा हो गया

“भैया कहां के हो”

“बस इते ही को, पास को गांव है ना”

“कैसे आए थे”

“पैदल ही”

“चलो हमारे साथ” कह कर एक मजदूर ने सुंदर को साइकिल के पीछे बिठा लिया। कहते ना जब दो दुखी मिलते हैं तो उनका दुख आपस में बट जाता है पर यह उन लोगों में होता है जो स्थिति में एक से हो, ज्यादा पैसे वाले तो अपने पैसे के रौब में ही रहते हैं चाहे वह अंदर से कितने ही खोखले हो। नमक रोटी खाने वाले मिल बैठकर कम से कम में भी मस्त रहते हैं। सुंदर को चौक पर उतार कर वे लोग आगे बढ़ गए। शायद किसी मिल के मजदूर थे। सुंदर सब मजदूरों के साथ आकर खड़ा हो गया। अभी मुकद्दम के आने में देरी थी। सभी अपनी अपनी बारी के इंतजार में खड़े थे। अभी 8:00 ही बजा था पर सूर्य देवता अपने प्रचंड रूप में धरती पर आग बरसा रहे थे। घंटाघर के आसपास रोज की रेहडी वाले, कुम्हार, पटवा

सभी अपनी अपनी दुकानें सजाने लगे थे। सभी ने छांव के लिए कनात बांध रखी थी। सुंदर के साथ सभी मजदूर धूप से बचने के लिए वंहा खड़े हो जाते। शादी ब्याह का सीजन चल रहा था। बाजार में बहुत भीढ़ थी। तभी मुकदम आ गया। सभी लोग उसे घेरकर खड़े हो गए। मुकद्दम भी ऊंचा पूरा पहलवान सा जवान था। बड़ी-बड़ी मूंछों और रोबदार चेहरे के कारण उस पर उसका काम जचता भी। मुंह में पान की गिलौरी दबाए वह सारे मजदूर को घेरकर नाम पुकार रहा था।

"रमेश, करण, बंसीलाल, ननकू, मोतीराम तुम लोग अपने साथ एक-एक आदमी और रख लो। दिन भर का काम है पूरी धाडकी मिलेगी। अच्छे से काम करना, कामचोरी की तो मैं सामने वाली पार्टी की चिक चिक नहीं सुनने का, चलो अब..."

कह कर मुकदम ने एक ऑटो में सबको बिठाया और ले गया। पीछे बचे मजदूरों के चेहरे उतर गए। सब इसी आस में थे कि आज तो मजूरी मिल ही जाएगी। मुकद्दम के साथ न जाना मतलब आधा दिन बेकार, फिर तो कोई छुट्टा मजदूर ले जाता और धाड़की भी आधे दिन की, चाहे वह जो काम कराये। कभी-कभी तो काम ज्यादा हो जाता है पर उतनी मजदूरी नहीं मिलती। सारे मजदूर वही घंटाघर की पार पर बैठ गए। सुंदर भी वही बने मंदिर की सीढ़ियों पर बैठ गया। दोपहर के 12:00 बज रहे थे। एक दो लोगों को काम करने वाले ले जा चुके थे। आस भी कैसी होती है हमेशा सकारात्मक रहे तो काम पूरे हुई हो जाते हैं जब कोई लेने आया तो सब की आस बन गई जो बच गए फिर उनकी आस अगले के लिए शुरू हो गई। ऐसा कहा जाता है कि आस पर ही जीवन टिका है। सुंदर भी इसी आस पर टिका बैठा था। उसने मंदिर के पास लगे नल से हाथ धोकर पानी पिया और वही सीडीयों पर बैठ गया। भूख लगने लगी थी उसने रुमाल में बंधी रोटी को देखा। यदि अभी खा लूंगा तो शाम तक क्या होगा। आज अभी तक काम नहीं मिला है, अगर आज का दिन भी ऐसे ही चला गया तो शाम तक ये ही रोटियां खा लूंगा। मीना तो उसकी मालकिन के घर खा लेती है। सुंदर के इसी अनिश्चित काम के कारण मीना ने भी कुछ घरों में बर्तन माजने का काम ले लिया। वह माधव को अपने साथ ले जाती। एक घर में उसे रोज खाना खिला देते। कभी-कभी सुंदर को बहुत ग्लानी भी होती कि वह

अपने परिवार के लिए कुछ नहीं कर पा रहा है। मीना दिन-ब दिन कितनी कमजोर हो रही है माधव को दूध में मुश्किल मिलता है डॉक्टर ने टॉनिक लेने को कहा है। यहां दो वक्त खाने के लाले पड़े हैं, फिर टॉनिक कहां से आए। तभी सुंदर को किसी ने आवाज दी

"अरे भैया! ओ भैया काम करोगे क्या?

"हां मालिक काम के लिए ही बैठे हैं, क्या काम है?"

"धाड़की क्या लोगे?

"दे देना साब, आधा दिन तो निकल गया, आधे दिन की दे देना"

"अच्छा चलो" वह आदमी सुंदर को अपनी मोटरसाइकिल के पीछे बैठा कर ले गया। वह नगर पालिका में ठेकेदार था। बारिश के पहले मोहल्लों की नालियों की सफाई की जा रही थी जिसका ठेका उसने लिया था। उसने सुंदर को एक नाली के पास ले जाकर खड़ा कर दिया। पूरी नाली जाम हुई पड़ी थी। बदबू के मारे सारा एरिया सडन से भरा था। ठेकेदार पूरे रास्ते पर बढ़बड़ाते आया।

"यह साले काम छोड़कर भाग गए, अब ऊपर क्या जवाब दूंगा। पैसे भी दो फिर भी काम नहीं करते। क्या जमाना आ गया है, काम है तो मजदूर नहीं मिल रहे हैं। तुम यह नाली साफ करो 1 घंटे में दूसरा काम बताता हूं, देखो अच्छे से करोगे तो कल से तुमको ही ले आऊंगा। मजदूरी भी पूरी दूंगा" सुंदर का दिमाग तो नाली के बदबू से चकरा रहा था। गर्मी के कारण पानी में और सडन आ गई थी।

"वह फावड़ा और तगाड़ी है तुम काम शुरू करूं मैं आता हूं 1 घंटे से" कहकर ठेकेदार चला गया। सुंदर कुछ देर तो ऐसे ही खड़ा रहा समझ ही नहीं आ रहा था कि क्या करें, कहां से शुरू करें, यहां आ तो गया हूं, काम भी करना है, उसने साथ लाई पानी की बोतल से पानी पिया और तो तगाड़ी फावड़ा उठाकर नाली के किनारे आ गया। जैसे ही उसने नाली में फावड़ा चलाया, बदबू का एक भपका उसके नथुनों में भर गया। उसे उपकई सी आ गई। सुबह से कुछ खाया नहीं था तो सिर चकराने लगा। उसने चारों ओर देखा नाली के दोनों तरफ कुछ दूरी पर बड़ी-बड़ी इमारते खड़ी उसे घुर रही थी। यह इमारत के पीछे का भाग है जहां नीरसता और गर्मी के कारण पूरी जमीन सूखी पड़ी थी। जगह-जगह कूड़े और पन्नीयों की ढेर लगे थे।

कचरा बिनने वाले कचरो के ढेर में से प्लास्टिक एवं टूटा-फूटा सामान बिन रहे थे, जिससे पनिया चितरभीतर होकर यहां वहां उड़ रही थी। सुंदर को मल्टी के चौकीदार के केबिन के पास नल दिखा। उसने तगाड़ी फावड़ा वही पटका और नल की और दौड़ पड़ा। चौकीदार सो रहा था पानी गिरने की आवाज सुनकर वह एकदम उठकर खड़ा हो गया।

"कौन है बे! किसने नल खोला"

"मैं हूं भैया, पानी पी रहा हूं",

"अच्छा..."

"अच्छे से बंद कर देना, यहां गर्मी में पानी की कमी पड़ रही है"

"हओ"

"कहां से आए हो..."सुंदर चौकीदार आवाज की दिशा में मुड़ा। आवाज केविन से आ रही थी। कुछ जवाब नहीं सुन चौकीदार केबीन से बाहर आ गया।

"कहां से आए हो, "

"यहीं पास के गांव से..." अपने सूखे पपड़ीदार होठों पर जीभ फेरते हुए शंकर ने जवाब दिया।

"ठेकेदार लाया होगा"

"जी.."

"हो गया काम शुरू"

कर ही कर रहा हूं, सर चकरा आ रहा है तो सोचा पानी पी लू"

"हां भैया गर्मी बहुत है" कहकर चौकीदार केबिन में जाकर फिर लेट गया। सुंदर फिर नाली के पास आ गया। उसने गमछा नाक से लेकर सिर तक लपेटा और नाली साफ करने लगा। उसके आंसू पसीने के साथ मिलकर गमछे में सुख रहे थे। धीरे-धीरे सुंदर ने नाली का सारा मलवा निकाल कर एक तरफ ढेर कर दिया। मलबा हटाने से नाली का रुका हुआ पानी अपनी रफ्तार से बहने लगा। पता नहीं मेरी जिंदगी का मलवा कब हटेगा और जिंदगी रफ्तार पकड़ेगी यह सोचते हुए वह ठेकेदार की राह देखने लगा। कुछ देर में ठेकेदार आ गया। सुंदर को नाली के कीचड़ से लटपट देख वह चिल्लाने लगा। क्यों ऐसे ही रहेगा क्या, जा हाथ पैर धोकर आ और चल मेरे साथ। सुंदर का शरीर जवाब दे रहा था। पैर आगे नहीं पढ़ रहे थे आंखों

के आगे अंधेरा छाने लगा। जैसे तेसे वह नल के पास पहुंचा। हाथ पैर धोए और बहुत देर तक सर और मुंह पर पानी मारता रहा की गर्मी कम हो सके। कितनी बार उसने हाथ धोए पर बदबू जाती ही नहीं थी। ठेकेदार फिर चिल्लाया "चल रे.." सुंदर उसके पीछे मोटरसाइकिल पर बैठ गया। वह उसे शहर के पुल पर ले आया जहां कुछ लोग ब्रिज की दीवारों की पुताई कर रहे थे। उनमें से एक के पास ठेकेदार ने सुंदर को ले जाकर खड़ा कर दिया। "सुन मंसूर इसे काम समझा दे और आज रात तक सारा काम खत्म कर देना" कहकर उसने मोटरसाइकिल चालू की और चल दिया। पीछे छूटा हुआ धुआ भी शायद मुकद्दम के कठोर व्यवहार की शिकायत कर रहा था।

"यहां पुताई करना है और किनारो से ऊपर टाइल्स भी लगानी है"

"हओ भैया" कह कर सुंदर एक तरफ बैठ गया। वह शहर का सबसे व्यस्तम पुल था। एक के बाद एक वाहनों की कतार चली जा रही थी। सभी मजदूर बचके काम कर रहे थे । सुंदर ने मनसूर से कहा, "भैया खाना खा लूं दिन भर से नहीं खाया, अब तो पेट छाती में घुसने को कर रहा है। अंतर यहां चिपकी जा रही है अरे दिन खत्म होने को है सुबह से कुछ खाया ही नहीं है क्या करते हो ऐसे कैसे मजदूरी करोगे यह मालिक लोग हमारे पसीने का ही नाम देते हैं शरीर में दम नहीं होगा तो काम बनेगा क्या तुम खाना खाओ फिर आ जाना सुंदर पास परिकेंद्र के पानी से हाथ धोकर वहीं पर पर पोटली खोल कर बैठ गया एक निराला ही खाया होगा की नली की बंदूक का बाप का जो अभी तक हाथ से आ रहा था सुंदर की नाक में भर गया उसे उपाय से आ गई उसने जैसे पानी से रोटी निकली क्योंकि अभी काम करना था वैसे ही रोटी पेट में गई शरीर थोड़ा हरकत में आया उसने पास पड़ा ब्रश और रंग उठाया और मंजू के साथ ब्रिज के दीवारें पोतने लगा उतरती दोपहर और भी तेज हो रही थी सूरज माथे पर चढ़ा जा रहा था सुंदर कितनी भी बार कैसे पानी पी चुका था पर गले में कांटे से फंसे जा रहे थे सुंदर ने गमछा पानी में जिला कर सर पर बांध लिया सूरज अपने घर लौट रहा था लोग भी दिन भर के काम को निपटाकर घरों की ओर जा रहे थे मंदसौर को सुंदर ने लगभग काम निपटा लिया था तभी मुकदमा गया काम पूरा देख खुश होते हुए बोला वह रे तूने तो बड़ा तू तो बड़ा ईमानदार निकला सारा काम निपटा लिया चल चल फिर आ जाना और जेब में से

नोट निकाल कर गिनने लगा साथ वाले सारे मजदूर उसे घेरकर खड़े हो गए। उसने सबको काम के हिसाब से धाड़की दे दी। सुंदर मजदूरी मिलने से ज्यादा कल की काम की निश्चितता पर खुश था। सभी मजदूर लौटने लगे

"कहां जाओगे सुंदर भाई?" मंसूर बोला "बस यही पास के गांव में धर्मपुरी" "अच्छा चलो, साइकिल पर छोड़ देता हूं" सुंदर मंशुर के पीछे बैठा था।

"आज तो सूरज आग उगल रहा है। गर्मी अभी तक कम नहीं हुई।

"हओ भैया!"कहते हुए सुंदर सोच रहा था। पेट की आग की तपन के आगे कोई गर्मी नहीं। धाड़की में मिले पैसों की ठंडक ने उसके सारे दिन की गर्मी को ठंडा कर दिया था।

❒❒❒

अपने अपने दड़बे

बादलों की गड़गड़ाहट के साथ अचानक तेज भारी शुरू हो गई। सुबह से सूरज की लुका छुपी तो चल रही थी पर एकाएक मौसम बदल जाएगा उम्मीद नहीं थी। वैसे भी मौसम और लोगों का कोई ठिकाना नहीं कब बदल जाए। मुंबई की बारिश वैसे भी धोखा ही देती है आज रविवार था और शानू देर तक सोना चाहती थी। गुड़िया भी बहुत परेशान कर रही थी पर बादलों की आवाज ने उसे जगा दिया। शानू जल्दी से गैलरी में जाकर कपड़े समेटने लगी। पानी की बड़ी बड़ी बौछारे गिरने लगी थी। गैलरी में छत पर जमा धूल और गंदगी बह–बह कर आ रही थी। सारी गैलरी छत से बहे कीचड़ से भर गई। गैलरी क्या दो कमरों के मकान के सामने का खुला हिस्सा था जिसे शानू ने पर्दे की आड़ कर दो भागों में बांट दिया था। यह मुंबई के एक स्लम इलाके की चाल थी जिसमें लोग अपने–अपने दड़बों में बसे थे। शानू जब से सोमेश अलग हुई थी तभी से इस चाल में रहने लगी। उसकी मां भी इसी चाल में रहती है शानू को सहारा चाहिए था और घर भी बाहर बारिश बढ़ गई थी। चाल चारों ओर से इतने बड़े–बड़े पेड़ों से घिरी थी कि सूरज की रोशनी कमरों तक नहीं आ पाती पूरी घर अंधेरे से भरा रहता और बारिश के दिनों में तो बादल पूरी तरह घिरे रहते। पेड़ों की पत्तियों के बीच से झांकना कठिन हो जाता है लगता जैसे बादल कमरों में ही घुसे आएंगे बड़े पेड़ों की डालियों में बहुत से पक्षियों ने अपने घर बना रखे थे। बारिश

का पानी लगने से उनके घोसले टूट गये जिससे वे भी इधर उधर उड़ रहे थे

शानू रविवार के सारे पेंडिंग काम निपटाकर बस लेटी ही थी। अचानक तेज हवा से दीवार पर टँगी शानू और सोमेश की शादी की तस्वीर नीचे गिर गई। अचानक आई आवाज से गुड़िया तेज तेज रोने लगी। रविवार के दिन तो वह अपनी बेटी के साथ पूरा समय बिता पाती थी। बाकी समय तो वह नानी के पास ही बढ़ रही थी, पल रही थी। वह अलसाई सी उठी और फ्रेम के सारे कांच उठाकर डस्टबिन में फेंक दिये। फोटो पर जगह जगह कांच के निशान बन गए थे। शानू ने फोटो को अलमारी में कपड़ो के नीचे तह कर रख दिया।

शानू की शादी सोमेश से 8 साल पहले हुई। शानू एक मल्टीनेशनल कंपनी में काम करती थी। सोमेश से उसकी पहचान एक दोस्त के मार्फत हुई। उनकी अलग से भी मुलाकाते होनी लगी।सोमेश बहुत हसमुख स्वभाव का था। हर बात का ध्यान रखता।धीरे धीरे शानू उसके करीब आने लगी। शानू निम्न मध्यमवर्गीय परिवार से थी।पढ़ लिखकर कुछ अच्छा करना चाहती थी। उसमें पैसा कमाने, बहुत आगे बढ़ने की लालसा थी।सोमेश के सपने भी बड़े थे, वह भौतिकता वादी मानसिकता का लड़का था। समय के अनुसार उसकी पसन्द बदलते रहती। कितनी ही बार शानू उसे समझाती की बार बार चीजे बदलने से कुछ हासिल नहीं होता। सोमेश हमेशा महंगी चीजो की ओर आकर्षित होता।और उन्हें खरीद कर ही मानता, चाहे उसके लिये उधार ही क्यो न लेना पड़े सोमेश और वह जब भी मिलते भविष्य के सपने देखते। दोनों समुद्र के किनारे बने कैफे में मिलते, रात के समय रेत के टीले से सटा कैफे अपनी रंगीन जगमगाती लाइटों से झिलमिलाते रहता। समुद्री ज्वार भाटो के कारण समुद्री किनारों पर जगह जगह रेत के टीले बन गए थे।जब लहरें एक दूसरे को थामे हुए आगे बढ़ती, एक के बाद एक बढती हुई और अपने निशान छोड़कर वापस चली जाती। जब लहरें किनारे पर आती तो एक गर्जना सी करती अपने पूरे जोश के साथ किनारे की ओर दौड़ती सब समेट देना चाहती अपने साथ फिर लौटते समय कुछ पाया कुछ खोया ऐसे ही चुपचाप चली जाती शानू और सोमेश कैफे में बैठे–बैठे देर रात तक इन लहरों के उतार–चढ़ाव को देखते हैं दोनों को इनमें उनका भविष्य दिखता, समुद्र सा विशाल, अपनी बाहें पसारे।

शानू के परिवार में उसकी मां और छोटी बहन थी सब इस साथ ही चाल में रहते। जब से शानू की नौकरी लगी थी परिवार की स्थिति में काफी सुधार आने लगा था। माँ भी काफी बेफिक्र हो गई थी। शानू ने बहन की पढ़ाई का खर्चा भी अपने पर ले लिया।

"अब हमें शादी कर लेना चाहिए शानू, तुम भी नौकरी में सेट हो चुकी हो। मेरा भी प्रमोशन होने वाला है। हम ऑफिस के पास ही मकान किराए पर ले लेते हैं। फिर धीरे से अपना मकान खरीद लेंगे। शादी कर अपना घर बसाएंगे" सोमश ने शानू से कहा। शानू समुद्र के किनारे एक पथ्थर से बंधी किश्ती को देख रही थीद्य

हां सोमेश, अब हमे घर बसा लेना चाहिए, जीवन में बंधन जरूरी है, नही तो स्थिरता नहीं रहती "

सोमेश और शानू ने कुछ दिनों में शादी कर ली। दोनों ने ऑफिस के पास ही एक मल्टी में मकान किराए पर ले लिया। सुबह से दोनों अपने काम निपटाकर ऑफिस निकल जाते। सोमेश शानू की सब काम में मदद कर करता। शादी के सात आठ महीने बीत गए। सोमेश का प्रमोशन हो चुका था। काम का दबाव बढ़ता जा रहा था तो सोमेश खीजने लगता द्यवह काम की अधिकता कहकर सारा मानसिक दबाव शानू पर निकालता दोनों में बहस होने लगती। दोनों में अबोला हो जाता। एक दिन शानू को पता चला कि वह प्रेग्नेंट हो गई है उस दिन सुबह से शानू ने छुट्टी ले ली। सुबह से अनमनी सी हो रही थी। मम्मी को खुशखबरी बताइ तो वह बहुत खुश हुई। शानू भी बहुत खुश थी द्यशाम को उसने सोमेश की पसंद का खाना बनाया। 7:00 बज गए थे सोमेश आते होंगे सोच कर शानू ने घर को जमाया और खुद भी तैयार हो गई। 8:00 बज गए फिर 9:00 से बढ़ता घड़ी का कांटा 10 बजा रहा था। दुनिया में शायद घड़ी ही है जो अनवरत चलते रहती है कभी नहीं रुकती। क्योंकि वह समय बताती है। समय जो बढ़ता ही जाता है। पीछे नहीं आता ना किसी के लिए रुकता है ना किसी की राह देखता है। आज भी ऐसे ही समय भाग रहा था। शानू को बैठे-बैठे झपकी लग गई। अचानक डोर बेल की आवाज से उसकी नींद खुली। घड़ी की सुइयां समकोण बना रही थी। शानू नींद में से सम्हलते हुए उठी। की होल से देखा तो सोमेश थे, शानू ने दरवाजा खुला। सोमेश शानू को लगभग धकाते हुए अंदर घुसा

और बैग सोफे पर पटक कर बिस्तर पर ढेर हो गया। सोमेश, सोमेश सुनो तो.... खाना.... मुझे बताना.... शानू कहते ही रह गई। सोमेश कब का नींद में जा चुका था। शानू ने भी सारा खाना फ्रिज के हवाले किया और कपड़े बदलकर सो गई। सोमेश सुबह जल्दी से ऑफिस चले गए, शानू की आंख लगी रही वह जागी तब तक सोमश जा चुके थे। शानू भी तैयार हो ऑफिस के लिए निकल गई। वहां से उसने सोमेश को कितने ही कॉल किये पर सोमेश फोन काट देता । शाम को भी शानू अपने समय पर घर पहुंच गई पर सोमेश का कोई ठिकाना नहीं था। ऐसे ही समय निकल रहा था, शानू सोमेश एक घर में रहते हुए भी एक दूसरे से मिल नहीं पा रहे थे। ना दोनों की बात ही हो पा रही थी। शानू जब भी सोमेश से बात करने की कोशिश करती वह किसी न किसी बहाने शानू को इग्नोर करता। एक दिन शानू को अपने ऑफिस कलिग से पता लगा कि सोमेश की नौकरी छूट चुकी है। शानू को सोमेष से यह उम्मीद नहीं थी कि वह उससे इतनी बड़ी बात छुपाएगा। एक दिन चार दिन भर घर पर रुकी जब सोमेश आया तो वह उसके पास जाकर बैठ गई "क्या हुआ सोमेश देख रही हूं तुम बहुत दिनों से परेशान हो क्या बात है" "कुछ नहीं शानू ऑफिस में बहुत काम है" "अच्छा तुम आजकल बात नहीं करते क्या हुआ" "कुछ नहीं"... सोमेश मोबाइल चालू कर कुछ ढूंढने के बहाने शानू से कट रहा था।

"सोमेश तुमसे कुछ बात करना है"

"बोलो" सोमेश मोबाइल में देखते हुए ही बोला

"मैं प्रेग्नेंट हूं, तुमसे बहुत दिनों से बात करना चाह रही थी बताने के लिए" सानू सोमेश का चेहरा देख रही थी। एकदम सपाट, सोमेश मोबाइल में ही लगा था। दोनों तरफ शांति थी, शायद सोमेश शब्द चुन रहा था। शानू भी राह देख रही थी कि आगे की बात सोमेश शुरू करे।

"मुझे पता लगा है कि तुम्हारी जॉब छूट गई है, क्या यह सही है" सोमेश मोबाइल छोड़ सानू को देखने लगा।

"हां अभी बहुत कुछ दिन हुए, मैंने रिजाइन कर दिया"

"क्यों क्या हो गया, तुम्हारा तो प्रमोशन हो रहा था"

"हां"

"फिर क्यो नहीं हुआ"

"क्यों नहीं हुआ, मुझे पता नहीं। अब जॉब छोड़ दी है दूसरी कोई नौकरी ढूंढ रहा हूं, तुम अपनी जॉब देखो मेरी चिंता मत करो।"

सोमेश बाहर चला गया।दरवाजे के लगने की आवाज से शानू का मन भी गूंज उठा एक झटका सा लगा उसे उसे लगा जैसे सीने में कुछ अटक गया है। सोमेश के इस तरह के व्यवहार की शानू ने बिल्कुल भी उम्मीद नहीं की थी। शानू चुप सी हो गई उदास रहने लगी। जैसे-जैसे महीने बढ़ते जा रहे थे वह और परेशान रहने लगी। सोमेश का व्यवहार वैसा ही बना रहा। शानू जब भी डॉक्टर के पास जाती तब डॉक्टर भी उसे समझाते की ज्यादा टेंशन ना ले।बच्चे की ग्रोथ पर असर पड़ेगा पर वह भी क्या करती है जब जीवन साथी साथ नहीं दे रहा था तो किस से उम्मीद करती।

एक दिन सोमेश चहकता हुआ घर आया। "शानू मुझे जॉब मिल गई है..."इस बार पहले से दुगना पैकेज है।ऑफिस वाले घर और गाड़ी भी देंगे"। वह उसे गले लगा कर खुश हो रहा था। शानू भी खुश थी कि इतने दिन बाद सोमेश ने खुलकर उससे बात की, नहीं तो पिछले तीन-चार महीनो से दोनों अजनबी से घर में रह रहे थे। शानू सोमेश के इस नेचर से वाकिफ थी। वह चीजो से बहुत जल्द उकता जाता। कभी कभी उसे उनकी शादीशुदा जिंदगी के चलने पर भी भरोसा नहीं होता। सोमेश अपनी नौकरी में व्यस्त हो गया पर अब भी वह शानू से कम सैलरी पता था तो अब घर में खर्चों के कारण दोनों में तनाव हो जाता। सोमेश के शौक अब भी वैसे ही थे। वह सारी सैलरी अपने महंगे शौक पर ही उड़ा देता। उसकी दोस्ती भी ऐसे ही लोगो मे थी, जिसे मेंटेन करने के लिए वह किसी भी हद तक चला जाता।

अभी तक शानू पूरे घर का खर्च चला रही थी। उन लोगों ने एक फ्लैट भी बुक कर दिया था जिसकी ईएमआई भी उसकी सैलरी से कट रही थी।बस सोमेश से कुछ नहीं कहती क्योंकि उसे पता था कि वह भी परेशानी में है। पर अब जबकि सोमेश की जॉब लग चुकी थी तब भी वह घर खर्चे में सहयोग नहीं करता। बात-बात पर शानू से हिसाब मांगता। शानू सोमेश को समझाती

"सोमेश हम दोनों जॉब में है, दोनों अपने खर्चे और घर के खर्चों के लिए जिम्मेदार है। इस तरह हिसाब मांगना कहां तक सही है" सोमेश कुछ नहीं कहता। धीरे-धीरे उसने घर में खर्च देना बंद कर दिया। शानू को सोमेश

के इस बदले व्यवहार से बहुत दुख हुआ। डिलीवरी का समय नजदीक आ गया।शानू अपनी माँ के घर आ गई।यँहा आने के बाद सोमेश से उसकी बात और कम हो गई।वह ही फोन लगाती तो सोमेश बात कर लेता, कभी कभी टाल भी देता, खुद से कभी शानू से बात नहीं करता।डॉक्टर की दी हुई डेट पर शानू की डिलीवरी हुई। माँ ने सोमेश को फोन लगाया- बेटा शानू को अस्पताल में भर्ती किया है अभी..... हाँ आता हूं, कहकर पूरी बात सुने बगैर ही सोमेश ने फोन काट दिया। सोमेश अगले दिन अस्पताल पहुंचा।शानू उसे देख रोने लगी-सोमेश तुम बदल गए हों" तुम अपने बच्चे को देखने भी नहीं आये"तुम चाहते क्या हो।" शानू मैं दूसरी शादी कर रहा हु, मुझे तुमसे तलाक चाहिये। मेरे ऑफिस के बॉस की बेटी से शादी कर मैं न्यूयार्क में सेट हो जाऊंगा, इसी शर्त पर मेरी नौकरी लगी है। वँहा मेरा सैलरी पैकेज भी बहुत है "करोड़ो में रहूंगा मैं" सोमेश एक सांस में सब कह गया।

सोमेश तुम बिक गए" शानू यह कहकर चुप हो गई।

सोमेश भी चुप था। बच्ची पालने में हाथ पैर चला रही थी। शायद जान गई थी कि पिता से वह आखरी बार मिल रही है।

ठीक है "तुम पेपर तैयार करवा लो, मैं साइन कर दूंगी।शानू शायद इस स्थिति के लिये तैयार थी, या उस समय कुछ समझ नहीं पा रही थी।सोमेश चला गया। बच्चे को बगैर देखे, शानू चुपचाप छत पर लगे पंखे को देखती रही और तकिया भीगता रहा।दो तीन दिनों में उसकी छुट्टी हो गई।वह फिर उसी चाल में आ गई। माँ के घर के करीब, उसे सहारा चाहिये था। अपने बच्चे के साथ वह उसी दबड़े में रहने लगी, फड़फड़ाती हुई। एक दिन ऑफिस के बाद शानू उसी समुद्र के किनारे बैठी हुई थी उसने देखा किनारे पर बंधी वह किश्ती लहरों के बहाव में बह गई थी।

❑❑❑

अजनबी

चर्र ..... की आवाज के साथ बस स्टैंड पर बस आकर रुकी। जमीन पर बैठी असंख्य मखियाँ अचानक आई बस की आवाज से भिनभिनाते हुए उड़ने लगी। स्टैंड पर बस के आते ही चाय समोसे वाले हरकत में आ गए। सब के सब एक साथ चिल्लाने लगे। लोगों ने कच्चे तैयार रखें समोसे कचोरी तेल में उतार दिए। दुकानों के छोटू मुन्ना हाथ में थालियां में भर भर कर सामान लेकर बसों की ओर दौड़ रहे थे। समोसा ₹10.... पानी बोतल ₹ 20.... फ्रूटी, कोल्ड ड्रिंक, कोल्ड मिल्क मूंगफली टाइम पास, राजश्री, गुटका पाउच, पेपर पढिये भास्कर, नई दुनिया... बच्चों को गिनती पहाड़ा सिखाए. .. गैस, कब्ज, बवासीर की दवा.. एक गोली सुबह खाने के बाद पाए पूरा आराम.... हर रोग की एक दवा..... बस में यात्रियों से ज्यादा सामान बेचने वाले लोग घूम रहे थे। हर तरफ यही आवाजे आ रही थी। कुछ लोग सामान खरीद रहे थे, कुछ बस से उतर गए और अपने-अपने काम में लग गए। ज्योति भी उतरकर बस स्टैंड की दीवार से लगी लोहे की कुर्सी पर बैठ गई। सारा बस स्टैंड लोगों की भीड़ से अटा पड़ा था। ज्योति ने इधर उधर देखा सभी अपने-अपने में व्यस्त थे।उसे यहां से पास के गांव के लिए दूसरी बस बदलना होती थी उसने पर्स से मोबाइल निकाल कर देखा, अभी बस आने में 10 मिनट का समय था। उसने कान में हेडफोन लगाए और गाने सुनाने लगी। जिससे वह बस स्टैंड के शोर से दूर हो गई थी। सामने एक परिवार

जमीन पर चादर बिछाकर बैठा था, शायद वह भी आने वाली बस की राह देख रहे थे। परिवार में एक छोटी बच्ची और माता-पिता थे।दोनों बच्ची को व्यस्त रखने में लगे थे।बच्ची गर्मी से परेशान हो रही थी। थोड़ी देर में माँ पेपर से हवा करने लगी। ठंडक पा बच्ची को नींद लग गई। पास ही एक अधेड़ जमीन पर चने फूटाने, मुरमुरे की रेहडी लगाकर बैठी थी

वह भी हाथ से सामान पर बैठी पर जीवियों को उड़ा रही थी और इधर-उधर आशा भरी निगाहों से देख भी लेती की कोई ग्राहक आ जाए। कभी-कभी वह उसे चाय वाले को भी घूरती जो अपनी बड़ी दुकान की आड़ में उसका मजाक उड़ाता था। कभी-कभी दुकान का कचरा कागज, पन्नी उड़कर उसके पास आ जाते। "अरे सेठ, अपनी दुकान का कचरा एक जगह रखो न संभाल कर"... "उड़ेगा तो जमीन पर ही ना तुम और कहीं जाकर बैठ जाओ ना"... कहते हुए अपने पान से लाल हुए दांतों को निपोर देता। वह चुप कर रह जाती। सच तो था वह जमीन पर ही थी।

ज्योति बहुत देर तक यह सब देखते रही। बस शायद और लेट हो गई थी। उसने हेडफोन निकले और चाय की दुकान की तरफ बढ़ गई। शाम के 5:00 बज गए थे। अभी घंटे भर का सफर और बचा था। वह बस की जानकारी लेने के बहाने चाय की दुकान के पास आकर खड़ी हो गई।"हां मैडम!चाय ...."हां दे, दो भैया "...."आज गांव वाली बस लेट हो गई टाइम तो हो गया है ".."हां मैडम, वह हाईवे पर जाम लगा है इसलिए सारी बसें लेट आ रही है, आ जाएगी थोड़ी देर में".. "अच्छा ..." चाय का डिस्पोजल हाथ में लिए ज्योति फिर अपनी जगह पर आ गई। उसने फिर कान में एयरफोन लगा लिए। बस स्टैंड की गहमा गहमी उससे बर्दाश्त नहीं हो रही थी। अचानक कोई व्यक्ति उसके बगल में आकर बैठ गया। उसने कुर्सी पर अपना लैपटॉप वाला बैग रखा और जेब से रुमाल निकाल कर पसीना पोंछने लगा और चारों ओर देखे जा रहा था। गर्मी से परेशान हो रहा था। चाय की दुकान से उसने पानी की बोतल खरीदी और ज्योति के बराबर बैठकर पानी पीने लगा। ज्योति उसकी हरकतों को देखते रही। उसने कान से हेडफोन निकाली और थोड़ा किनारे पर सरक गई। वह आदमी अपने में ही लगा था। उसने बैग से चिप्स का पैकेट निकाला और खाने लगा। ज्योति का ध्यान उसी पर लगा था। वह बार बार उसकी हरकतों को देख रही थी और जब

भी उसे आदमी का ध्यान ज्योति पर जाता वह इधर उधर देखने लगती। यह कोई नया व्यक्ति लग रहा था जो कभी दिखा नहीं, इसलिए उसे उत्सुकता हो रही थी। सामने वाले ने ज्योति को अपनी तरफ देखते पाया तो चिप्स भी ऑफर की, ज्योति झेंप कर मुस्कुराने लगी और बोली "नहीं, थैंक यू "....उसने देखा बस आ चुकी थी उसने बैग उठाया और बस की तरफ दौड़ पड़ी। बहुत लेट हो गई थी वह। मुकेश दुकान मंगल कर चुके थे। रोशनी भी सो गई थी। ज्योति ने जल्दी से हाथ पैर धोए और किचन की तरफ भागी।

अगले दिन फिर ज्योति उसी बस स्टैंड पर उसी कुर्सी पर बैठी थी। कान में हेडफोन लगाए गाने सुन रही थी। तभी वह फिर उसके बगल में आकर बैठ गया। दोनों में आंखों में अभिवादन हुआ। वह कुर्सी पर बैग रख पसीना पोंछने लगा। "बहुत गर्मी है, उमस हो रही है"....वह ज्योति को देखते हुए बोला।ज्योति कान में हेडफोन लगाई थी, इसलिए कुछ सुन नहीं पाई। यह जरूर समझ गई कि वह कुछ बोल रहा है उसने हेडफोन उतार कर गले में लटका लिया और फिर उसकी और देखकर मुस्कुराने लगी, और अपनी झेप मिटाने के लिए बोली- "हां, क्या कहा, आप कुछ कह रहे थे" "..." गर्मी बहुत है यहां, "हाँ" कहकर ज्योति फिर फोन देखने लगी। वह भी अपना लैपटॉप निकाल कुछ काम करने लगा। थोड़ी देर में ज्योति की बस आ गई वह बस में चढ़ गई। खिड़की से हवा आने लगी तो ज्योति को झपकी लगने लगी। आज वह समय पर घर पहुंच गई। मुकेश दुकान में ही थे रोशनी वही कमरे में खेल रही थी। उसने रोशनी को गोद में उठाया और बाथरूम में जाकर फ्रेश हुई, और किचन में आ गई।

ज्योति पास के शहर के प्राइवेट स्कूल में पढाती थी। पति की गांव में ही किराने की दुकान थी। 2 साल की बेटी रोशनी को दिनभर पति के पास छोड़ नौकरी कर रही थी वह। बेहतर जिंदगी के लिए दोनों मेहनत में लगे थे। ज्योति रोज गांव से सुबह की बस में चढ़ती फिर शहर जाने के लिए उसे 10 किलोमीटर के बाद दूसरी बस बदलनी पड़ती। वह सुबह से घर के काम करके निकलती। मुकेश दिन भर दुकान और रोशनी को संभालते। ठीक जिंदगी चल रही थी दोनों की। जब वह पहली बस से उतरती तो अगली बस के इंतजार में बस स्टैंड पर बैठ जाती। अगले आधे घंटे के अंतर से दूसरी बस भी आ जाती। तब तक ज्योति बस स्टैंड के हलचल देखती रहती।

कितने ही नए-नए चेहरे रोज दिखते, हर किसी चेहरे पर नई कहानी होती। कोई खुश दिखता, कोई दुखी। कोई परिवार के साथ होता तो कोई अकेला। हर कोई अपनी मंजिल तक जाने के लिए यहां आता और जाता।

दो दिनों से वह अजनबी भी यहां मिल रहा था। आज भी ज्योति वही अपने नियत स्थान पर बैठी थी। कुछ देर में वह भी आकर बैठ गया। दोनों में अभिवादन हुआ, फिर दोनों और चुप्पी छा गई। वह बैग से कुछ निकाल कर खाने लगा। ज्योति कनखियों से उसे देख रही थी। आज उसने हेडफोन नहीं लगाए थे। वह ज्योति की और देख बोला "इस साल बारिश बहुत लेट हो गई"...

"हां, जून लग गया, अब होगी शायद".. "मुझे ही गर्मी ज्यादा लगती है "...वह रुमाल निकाल पसीना पोंछने लगा

"आप यहां रोज दिखती है, कहां जाती है, "...

"मैं सिर्रा जाती हूं,"

"अच्छा, मैं अगले स्टाफ पर"

"अच्छा"

"आप जॉब में है, क्या करती है टीचर होगी ना"...

उसके प्रश्न और उन्ही में उत्तर सुन ज्योति हंसने लगी।

"मैं सौरभ! खेड़ी में पटवारी बनकर आया हूं। पहली पोस्टिंग है। अभी अप डाउन कर रहा हूं फिर देखता हूं वही शिफ्ट हो जाऊंगा। आप तो वही की है कैसी जगह है, रहने के लिए जगह मिल जाएगी। रोज-रोज आने जाने से थक गया हूं..."

ज्योति सौरभ का चेहरा देखती रह गई। कोई अजनबी उससे इतनी बातें कर सकता है यह सोचा नहीं था उसने। बात करते करते अचानक सौरव का हाथ ज्योति के हाथ से छू गया। एकदम अजनबी छुअन से ज्योति सहम गई, उसने एकदम हाथ खींच लिया। सौरव भी सॉरी बोलकर एक तरफ सरक गया।

"खेड़ी छोटा सा गांव है ज्यादातर खेती किसानी वाले लोग हैं। रहने की जगह तो मिल जाएगी पर शहर जैसी सुविधाएं नहीं मिल सकेगी।, "...

"अच्छा, फिर अप डाउन ही सही है ना..." सौरव हंसने लगा। ज्योति भी मुस्कुरा दी। उसके पास तो अप डाउन के अलावा कोई ऑप्शन ही नहीं

था। सौरभ के परिवार में उसकी मां और छोटे भाई का परिवार था। सौरभ प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी के कारण शादी करना नहीं चाहता था। मां बीमार रहती थी तो छोटे भाई की शादी कर दी। जिसका एक बेटा भी था। छोटा भाई अपने परिवार में मस्त था मां अपनी बीमारी में। सौरभ की उम्र इतनी बढ़ गई थी कि अब उसके लिए रिश्ते आना बंद हो गए। 40 बसंत पार कर चुका सौरव अधेड़ दिखने लगा था। उसकी खिचड़ी हो चुके बाल और घनी मूछे उसकी उम्र और बड़ी दिखाते।

सौरभ और ज्योति रोज शाम को लौटते समय इसी बस स्टैंड पर मिलते। दोनों में बातें शुरू हो गई थी। पहले तो बस स्टैंड कीअवस्था, गर्मी, राजनीति, देश पर बात होती, दोनों सभी विषयों पर बात करते। अब रोज एक दूसरे की राह देखते। खूब हँसी मजाक करते। सौरव की आदत थी, बात बात हंसने की, ज्योति भी उसका साथ देती। वह कभी कभी ज्योति के हाथ पर हाथ रख देता, ज्योति कुछ नहीं कहती, उसे भी वह रूहानी एहसास सुकून देता उनको मिले तीन-चार महीने ही हुए थे पर लगता बहुत पुरानी पहचान है।कोई आने में थोड़ा लेट हो जाता है दूसरा बेचैन रहता। उनके बीच एक उनका ऐसा रिश्ता बन गया था जिसकी कोई पहचान नहीं थी। बस उन्हें एक दूसरे की जरूरत महसूस होने लगी थी।

ज्योति का पति बहुत अंतर्मुखी स्वभाव का था। वह थकहार कर घर पहुंचती, कभी वह पति से बात करने की कोशिश भी करती तो मुकेश दुकान के हिसाब में ही अटका रहता। कभी-कभी खींजकर कहता- "तुम्हारी नौकरी के चक्कर में दुकान पर ध्यान नहीं दे पाता। रोशनी को भी देखना पड़ता है। कितनी बार में उसे चुप करते करते सामान देता हूं ग्राहक को। रोशनी बड़ी नहीं हो जाती तब तक तुम नौकरी छोड़ दो।.." ज्योति को लगता वैसे ही इतनी मुश्किल से नौकरी मिली है और यदि छोड़ दूं तो फिर मिलेगी भी नहीं। मुकेश को क्या पता खुद तो गांव से निकले नहीं शहर का जीवन कैसा है। फिर उसे लगता है कि वह अपने पैरों पर खड़ी तो है नौकरी छोड़ देगी तो क्या करेगी। इसलिए वह कभी-कभी रोशनी को अपने साथ ले जाती। दिनभर स्कूल में अपने साथ ही रखती। 3 साल की हुई तो ज्योति ने वही स्कूल में उसका दाखिला करवा दिया।

ज्योति काम की चिंता, अपना भविष्य सब लेकर घर से निकलती, पर

उन 15 से 20 मिनट में वह एक दूसरे से सारी बातें कर लेते। अपने घर की, भविष्य की, ज्योति अपने स्कूल की, परिवार की, पति की बेरुखी की, बच्ची की परवरिश की, सब बातें सौरव को बताती। सौरभ भी उसे सही सलाह भी देता।

सौरभ भी अपने मन की बातें ज्योति से कहता। दोनों का रिश्ता दिन–ब–दिन बढ़ता जा रहा था। दोनों हंसते बतियाते और बस आ जाने पर अपनी–अपनी मंजिल की ओर बढ़ जाते।

उनको मिले लगभग साल भर हो गया था। एक दिन बहुत तेज बारिश हो रही थी। पूरे बस स्टैंड की फर्श कीचड़ से भर गई थी। लोग बारिश से बचने के लिए बस स्टैंड की छत के नीचे आकर खड़े हो गए थे। भीड़ सी लग गई थी वहां। ज्योति अभी–अभी बस से उतरी और दौड़ती हुई अंदर दाखिल हुई। कुर्सी पर पर्स रख दुपट्टे से पानी पोछा और कुर्सी पर बैठ गई। मोबाइल में समय देखा तो बस आने में 10 मिनट बचे थे। वह सौरव का रास्ता देखने लगी। सामने बारिश के कारण लोग खड़े थे बाहर का कुछ दिख नहीं रहा था। एक बार तो वह खुद उठकर बाहर देखा आई। लगभग 15 मिनट में उसकी बस भी आ गई। वह बस में बैठकर भी बार–बार बाहर देखती रही कि सौरव दिख जाए। शायद आज वह आया ही नहीं सोचकर वह मोबाइल देखने लगी। अगले दिन भी वह नहीं आया और अगले 15 दिनों तक भी सौरभ का कोई पता नहीं था। ज्योति और सौरव अपनी बातों में इतने मशगूल होते की एक दूसरे का फोन नंबर भी नहीं लिया। अब ज्योति को सौरभ की कमी बहुत अखर रही थी।

"मैडम जी, आज तो वो साब नहीं आए, दिख नहीं रहे हैं आजकल "

"पता नहीं ..." दुनिया किसी भी औरत और आदमी की दोस्ती या बात करने को गलत नजरिया से देखते हैं चाय वाले ने जिस अंदाज ज्योति से कहा वह समझ गई थी।

लगभग 20 दिनों के बाद सौरभ फिर वही आकर बैठा ज्योति के बगल में।

"हेलो ज्योति.."

ज्योति हेडफोन लगाए गाने सुन रही थी। सौरभ नहीं आता था तो ज्योति फिर अपने पुराने रूटिंग पर आ गई थी। पर उसे हर समय सौरभ की कमी

अखरती। ज्योति ने जैसे ही सौरभ को देखा हेडफोन उतार कर बोली

"कहां थे, छुट्टी पर थे क्या, खेड़ी में रहने लगे हो क्या, आना-जाना छोड़ दिया..." ज्योति ने सवालों की झड़ी लगा दी। वह एकटक सौरभ के चेहरे को देख रही थी। सौरभ ने सिर पर पहनी कैप उतारी

" क्या हुआ...." ज्योति के शब्द मुंह में ही अटक गए।

"मम्मी नहीं रही ....." सौरभ उदास हो गया।

ज्योति को सौरभ को ढांढस देने के लिए शब्द ही नहीं मिल रहे थे।

"कैसे, कब ...." वह इतना ही बोल पाई। "15 दिन हो गए, अटैक आ गया था। मैं यहां से घर पहुंचा तो बेसुध पड़ी थी वो। अस्पताल ले गया तो डॉक्टर ने वेंटिलेटर पर डाल दिया। दो-तीन दिन वेंटिलेटर पर नकली सांसे चलती रही फिर डॉक्टर ने कह दिया कि घर ले जाओ।छोटे भाई से कितनी बार कहा कि मां को अपने पास रख लो पर नहीं माना वह।माँ की देखभाल नहीं हो पाई अच्छे से। मुझे बहुत बुरा लग रहा है।माँ ही तो थी मेरी..."

सौरभ की आंखों में आंसू बहने लगे। ज्योति ने पहली बार किसी आदमी को रोते हुए देखा था। उसे भी बुरा लग रहा था।

" सौरभ....!"

"हम्म..."

उसने रुमाल मुह पोछा।

" मैं बहुत अकेला हो गया हूं। मेरा घर जाने का मन ही नहीं करता..."

सौरव मैं समझ सकती हूं दुखी मत हो, समय के साथ सब ठीक हो जाएगा, माँ बूढ़ी थी, बीमार थी, जाना तो था..."

हम्म..."

ज्योति तुम न मिलती तो शायद मैं डिप्रेसन में चला जाता। मुझे तुमसे सिर्फ ये 15 मिनट चाहिए। और कुछ नहीं मांगता मैं। मैं तुमसे ही मन की बात कर लेता हूं। मुझे पता है कि तुम शादी शुदा हो। तुम्हारी जिम्मेदारीया है, पर मुझे तुम्हारा बस इतना सा समय चाहिए"

ज्योति भी तो यही चाहती थी, बस सौरव का थोड़ा सा समय।

"ठीक है सौरभ, हम बात तो करते हैं तुम कह दिया करो सब...और" ज्योति ने सौरभ का हाथ पकड़ लिया।

❑❑❑